وَاعْلَمُوٓا اَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّنْ شَيْءٍ فَاَنَّ لِلّٰهِ خُمُسَهٗ وَلِلرَّسُوْلِ وَلِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۙ اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ وَمَآ اَنْزَلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا

(४१) तथा जान लो कि तुम जिस प्रकार का जो भी युद्ध का धन [1] (परिहार) प्राप्त करो उसमें से पाँचवाँ भाग तो अल्लाह एवं ईशदूत तथा समीपवर्तियों एवं अनाथों तथा निर्धनों एवं यात्रियों[2] के लिये है, यदि तुम ने अल्लाह के प्रति ईमान रखा है तथा उसके प्रति जो

---

[1]ग़नीमत (परिहार) से तात्पर्य वह धन है जो संग्राम में काफ़िरों को पराजित करके प्राप्त किया जाता है। पूर्व समुदाय में यह रीति थी कि लड़ाई की समाप्ती के पश्चात परिहार को एकत्रित किया जाता तथा आकाश से अग्नि आकर उसे जला कर भस्म कर देती किन्तु मुसलमानों के लिये परिहार वैधानिक बना दिया गया तथा जो धन बिना लड़ाई, संधि अथवा कर द्वारा प्राप्त हो उसे "फ़ैय" कहा जाता है कभी ग़नीमत को भी "फ़ैय" कहा जाता है, مِن شَيۡءٍ से अभिप्राय है जो कुछ भी हो अर्थात तनिक अथवा अधिक मूल्यवान अथवा साधारण सब को एकत्रित कर नियमानुसार वितरण किया जायेगा। किसी सैनिक को वितरण से पूर्व अपने पास रखने की अनुमति नहीं।

[2]अल्लाह का शब्द मात्र शुभ के लिए अथवा इसलिये है कि प्रत्येक वस्तु का वास्तविक मालिक तो वही है तथा आदेश भी उसी का चलता है। तात्पर्य अल्लाह तथा रसूल के भाग से एक ही है, अर्थात सारे माल को पाँच भागों में विभाजित करके चार भाग तो उन विजयी सैनिकों को बाँट दिये जायेंगे जिन्होंने युद्ध में भाग लिया हो। उन में भी पैदल को एक भाग तथा सवार को तीन गुना भाग मिलेगा। पाँचवां भाग जिसे अरबी भाषा में ख़ुम्स कहते हैं। कहा जाता है कि इसके पुन: पाँच भाग किये जायेंगे एक भाग रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को (तथा आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पश्चात सार्वजनिक सेवा में व्यय किया जायेगा) जैसाकि स्वयं आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी यह भाग मुसलमानों पर ही व्यय करते थे, बल्कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया भी है

«وَالْخُمُسُ مَرْدُودٌ عَلَيْكُمْ».

"अर्थात मेरा जो पाँचवाँ भाग है, वह भी मुसलमानों की समस्या समाधान पर व्यय होता है।" (सुनने नसाई, इस हदीस को अलवानी न सहीह नसाई में प्रमाणित माना है, अल-निसाई ३८५८, तथा मुसनद अहमद भाग ५ पृष्ठ ३१९)

दूसरा भाग रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निकटतम सम्बन्धियों का, फिर अनाथ, निर्धन तथा यात्रियों का। कहा जाता है कि यह ख़ुम्स आवश्यकतानुसार व्यय किया जायेगा।

हम ने अपने भक्त पर उस दिन उतारा है जो सत्य-असत्य[1] के बीच विलगाव का[2] था जिस दिन दोनों सेनायें भिड़ गई थीं,[3] तथा अल्लाह प्रत्येक वस्तु पर सर्वशक्तिमान है।

يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ۝٤١

(४२) जबकि तुम समीप के किनारे पर तथा वे दूर के किनारे पर थे,[4] तथा यात्रीगण तुम से (बहुत) नीचे थे,[5] यदि तुम परस्पर वचन देते तो निर्धारित समय पर पहुँचने में विभेद कर जाते,[6] किन्तु अल्लाह को एक काम कर

اِذْ اَنْتُمْ بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوٰى وَالرَّكْبُ اَسْفَلَ مِنْكُمْ ؕ وَلَوْ تَوَاعَدْتُّمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِى الْمِيْعٰدِ ۙ وَلٰكِنْ

---

[1]इस उतरने से तात्पर्य फरिश्तों का तथा अल्लाह की आयतों (चमत्कारों आदि) का उतरना जो बद्र के युद्ध में हुआ।

[2]बद्र का युद्ध १७ रमज़ानुल मुबारक २ हिजरी को हुआ। उस दिन को यौमुल फ़ुरक़ान इसलिए कहा गया कि यह काफ़िरों तथा मुसलमानों के मध्य प्रथम युद्ध था तथा मुसलमानों को विजय तथा प्रभाव प्रदान करके यह सिद्ध कर दिया कि इस्लाम सत्य है तथा कुफ़्र एवं शिर्क (बहुदेववाद) असत्य है।

[3]अर्थात मुसलमानों तथा काफ़िरों की सेनायें।

[4]दुनिया शब्द अरबी भाषा का है, इसका उद्‌गम दूतत्व (دُنُوٌّ) से है जिसका अर्थ है निकट तात्पर्य है वह किनारा जो मदीना नगर की ओर था जिस ओर मुसलमान थे। قصوى कुस्वा कहते हैं दूर को, काफ़िर दूसरे किनारे पर थे जो मदीना नगर से दूर था।

[5]इससे तात्पर्य वह व्यापारिक क़ाफ़िला था जो आदरणीय अबु सुफ़ियान के नेतृत्व में सीरिया से वापस मक्का की ओर जा रहा था तथा जिसे प्राप्त करने के लिए ही वास्तव में मुसलमान इस ओर आये थे। यह पर्वत से बहुत दूर पश्चिम की ओर घाटी में था, जबकि बद्र जहाँ युद्ध हुआ वह ऊँचाई पर था

[6]अर्थात यदि युद्ध के लिए योजनानुसार दिन-तिथि की एक दूसरे के साथ वायदा होता अथवा घोषणा होती, तो सम्भव था कि कोई भी पक्ष बिना युद्ध के पराजय स्वीकार कर लेता, परन्तु इस युद्ध का होना अल्लाह ने लिख रखा था, इसलिए ऐसे कारण उत्पन्न कर दिये गये कि बिना किसी घोषणा के दोनों पक्ष आमने-सामने एक-दूसरे के विरुद्ध पंक्तिबद्ध हो गये।

ही डलाना था जो निर्धारित हो चुका था ताकि जो नाश हो वह तर्क पर (अर्थात निश्चय जानकर) नाश हो एवं जो जीवित रह जाये वह भी तर्क पर (सत्य पहचान कर) जीवित रहे तथा अल्लाह भली-भाँति सुनने वाला जानने वाला है।[1]

لِيَقْضِيَ اللَّهُ أَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا ۙ لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ بَيِّنَةٍ وَيَحْيَىٰ مَنْ حَيَّ عَنْ بَيِّنَةٍ ۗ وَإِنَّ اللَّهَ لَسَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٤٢﴾

(४३) जब कि तुझे तेरे सपने में अल्लाह ने उन की संख्या कम दिखाई, यदि उन की अधिकता दिखाता तो तुम कायर बन जाते तथा इस विषय में परस्पर मतभेद करते किन्तु अल्लाह ने बचा लिया, निश्चय वह अन्तर्यामी है।[2]

إِذْ يُرِيكَهُمُ اللَّهُ فِي مَنَامِكَ قَلِيلًا ۖ وَلَوْ أَرَاكَهُمْ كَثِيرًا لَفَشِلْتُمْ وَلَتَنَازَعْتُمْ فِي الْأَمْرِ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ سَلَّمَ ۗ إِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٤٣﴾

(४४) तथा जब कि उसने मिलने के समय उन्हें तुम्हारी दृष्टि में बहुत कम दिखाया तथा तुम्हें उनकी दृष्टि में कम दिखाया।[3]

وَإِذْ يُرِيكُمُوهُمْ إِذِ الْتَقَيْتُمْ فِي أَعْيُنِكُمْ قَلِيلًا وَيُقَلِّلُكُمْ فِي أَعْيُنِهِمْ لِيَقْضِيَ اللَّهُ أَمْرًا

---

[1]यह कारण है अल्लाह के उस भाग्य लेख का जिसके आधार पर बद्र में दोनों पक्ष एकत्रित हुए। ताकि जो ईमान पर जीवित रहे तो वह इस प्रमाण के साथ जीवित रहे तथा उसे दृढ़ विश्वास हो कि इस्लाम सत्य है क्योंकि सत्यता को वह बद्र में देख चुका है, तथा जो अधर्म की अवस्था में मरे तो वह भी इस प्रमाण के साथ मरे कि उसका मार्ग भटका हुआ था क्योंकि यह स्पष्ट हो चुका।

[2]अल्लाह तआला ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को स्वप्न में मूर्तिपूजकों की संख्या कम दिखायी तथा वही संख्या आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सहाबा के सामने वर्णन कर दी, जिससे उनके साहस बढ़ गये। यदि इसके विपरीत काफ़िरों की संख्या अधिक दिखायी जाती तो सहाबा के दिलों में कायरता उत्पन्न होती तथा आपसी मतभेद उत्पन्न होने की सम्भावना थी। परन्तु अल्लाह ने इन दोनों परिस्थितियों से मुसलमानों को बचा लिया।

[3]ताकि वह काफ़िर भी तुम से भयभीत होकर पीछे न हटें। प्रथम घटना स्वप्न की थी तथा यह दिखाना ठीक युद्ध प्रारम्भ होने से पूर्व था, जैसाकि क़ुरआन के शब्दों से स्पष्ट होता है। फिर भी यह घटना युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व की है। परन्तु जब युद्ध प्रारम्भ

كَانَ مَفْعُوْلًا ۭ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ۝

ताकि अल्लाह (तआला) उस कार्य को अन्त तक पहुँचा दे, जो करना ही था।[1] तथा सभी विषय अल्लाह ही की ओर फेरे जाते हैं।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اِذَا لَقِيْتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوْا وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝

(४५) हे ईमानवालो ! जब तुम किसी (विरोधी) सेना से भिड़ जाओ, तो अड़ जाओ तथा अल्लाह को अत्यधिक याद करो, ताकि तुम्हें सफलता प्राप्त हो।[2]

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَا تَنَازَعُوْا فَتَفْشَلُوْا وَتَذْهَبَ رِيْحُكُمْ وَاصْبِرُوْا ۭ

(४६) तथा अल्लाह की एवं उसके रसूल की आज्ञा का पालन करते रहो, आपस में मतभेद मत रखो, वरन् कायर हो जाओगे तथा तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी तथा धैर्य और

हो गया, तो काफ़िरों को मुसलमान अपने से दुगुना दिखायी पड़ रहे थे। जैसा कि सूरः आले इमरान की आयत संख्या १३ से ज्ञात होता है बद्र में अधिक दिखाने का तात्पर्य यह था कि मुसलमानों की अधिक संख्या देख कर काफ़िरों के दिलों में मुसलमानों का भय उत्पन्न हो जिसके कारण उनमें कायरता उत्पन्न हो। इसके विपरीत प्रारम्भ में कम संख्या दिखाने का उद्देश्य यह था कि वे युद्ध से मुह न फेर लें।

[1]इस सभी का उद्देश्य यही था कि अल्लाह तआला ने जो निर्णय कर दिया था, वह पूर्ण हो जाये, इसलिए उसने इसके कारण उत्पन्न कर दिये।

[2]अब मुसलमानों को युद्ध के वे नियम बताये जा रहे हैं, जो शत्रु से युद्ध करते समय ध्यान में रखना आवश्यक है सर्वप्रथम बात, दृढ़ता तथा साहस रखना है क्योंकि इसके बिना युद्ध के मैदान में ठहरना ही सम्भव नहीं है, तथापि इस से पुन: आक्रमण करने के लिए अथवा अपनी सेना में मिलने के लिये पीठ दिखाना अलग है क्योंकि कभी पुन: आक्रमण करने के लिए भी पीछे हटना अनिवार्य होता है जिसका वर्णन इससे पूर्व किया जा चुका है। दूसरा निर्देश यह है कि अल्लाह को अधिकता से याद करो ताकि यदि मुसलमान थोड़े भी हों तो अधिक याद करने के कारण अल्लाह भी उनकी ओर आकर्षित रहे तथा यदि मुसलमान अधिक हों, तो अधिक याद करने के कारण मुसलमानों में गर्व तथा घमंड उत्पन्न न हो। बल्कि वास्तविक ध्यान अल्लाह की सहायता पर ही रहे।

إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّٰبِرِينَ ۝٤٦

विश्वास रखो, नि:संदेह अल्लाह तआला सहनशील, धैर्यवानों के साथ है ।[1]

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ خَرَجُوا مِن دِيَٰرِهِم بَطَرًا وَرِئَآءَ النَّاسِ وَيَصُدُّونَ عَن سَبِيلِ اللَّهِ ۚ وَاللَّهُ بِمَا يَعْمَلُونَ مُحِيطٌ ۝٤٧

(४७) तथा उन लोगों जैसे न बनो, जो गर्व करते हुए, तथा लोगों में अभिमान करते हुए अपने घरों से चले तथा अल्लाह के मार्ग से रोकते थे ।[2] जो कुछ वह कर रहे हैं, अल्लाह उसे घेर लेने वाला है ।

وَإِذْ زَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَٰنُ أَعْمَٰلَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمُ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ وَإِنِّي جَارٌ لَّكُمْ ۖ فَلَمَّا تَرَآءَتِ الْفِئَتَانِ نَكَصَ عَلَىٰ عَقِبَيْهِ

(४८) तथा जब कि उनके कर्मों को शैतान उन्हें सुशोभित दिखा रहा था तथा कह रहा था कि मनुष्यों में से कोई भी आज तुम पर प्रभावशाली नहीं हो सकता मैं स्वयं तुम्हारा समर्थक हूँ, परन्तु जब दोनों गुट प्रकट हुए,

[1]तीसरा निर्देश अल्लाह तथा उसके रसूल की आज्ञापालन है । स्पष्ट बात है कि इस कठोर स्थिति में अल्लाह तथा उसके रसूल की अवहेलना कितनी भयानक हो सकती है । इसलिए एक मुसलमान को प्रत्येक समय अल्लाह तथा उसके रसूल की आज्ञा पालन आवश्यक है । फिर भी रण क्षेत्र में इसकी विशेषता और बढ़ जाती है । तथा इस अवसर पर थोड़ी सी अवज्ञा अल्लाह की सहायता से वंचित कर सकती है । चौथी बात आपस में मतभेद एवं संघर्ष मत करो, इससे तुम कायर बन जाओगे तथा हवा उखड़ जायेगी । तथा पाँचवाँ निर्देश धैर्य रखो । अर्थात युद्ध में कितनी ही कठिन परिस्थिति आ जाये तथा युद्ध में तीव्रता आ जाये तब भी धैर्य न छोड़ो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी एक हदीस में फ़रमाया,

"लोगो ! शत्रु से मुठभेड़ की कामना न करो तथा अल्लाह से शान्ति की कामना करो । फिर भी यदि शत्रु से सामना करने का अवसर आ जाये, तो धैर्य रखो (अर्थात दृढ़ता से लड़ो) तथा जान लो कि स्वर्ग तलवार की छाया के नीचे है ।"(सहीह बुख़ारी किताबुल जिहाद) अध्याय जब ईशदूत अपराहन लड़ाई आरम्भ न करते तो सूर्य ढलने तक लड़ाई में विलम्ब करते ।

[2]मक्का के मिश्रणवादी जब अपने यात्रीगण की सुरक्षा तथा युद्ध की इच्छा से निकले, तो बड़े गर्व तथा घमण्ड से निकले, मुसलमानों को इस प्रकार के काफ़िरों के कर्मों से रोका गया ।

وَقَالَ إِنِّي بَرِيٓءٌ مِّنكُمْ إِنِّيٓ أَرَىٰ مَا لَا تَرَوْنَ إِنِّيٓ أَخَافُ ٱللَّهَ ۚ وَٱللَّهُ شَدِيدُ ٱلْعِقَابِ ﴿٤٨﴾

तो अपनी ऐड़ियों के बल पीछे पलट गया तथा कहने लगा कि मैं तो तुम से अलग हूँ। मैं वह देख रहा हूँ जो तुम नहीं देख रहे।[1] मैं अल्लाह से डरता हूँ।[2] तथा अल्लाह (तआला) कठोर यातना वाला है।[3]

إِذْ يَقُولُ ٱلْمُنَٰفِقُونَ وَٱلَّذِينَ فِى قُلُوبِهِم مَّرَضٌ غَرَّ هَٰٓؤُلَآءِ دِينُهُمْ ۗ وَمَن يَتَوَكَّلْ عَلَى ٱللَّهِ

(४९) जब कि मुनाफ़िक (द्वयवादी) लोग कह रहे थे तथा वह भी जिनके दिलों में रोग था।[4] कि उन्हें तो उनके धर्म ने धोके में डाल दिया है।[5] और जो भी अल्लाह पर भरोसा करे तो

---

[1]मूर्तिपूजक जब मक्का से निकले तो उन्हें अपने विरोधी क़बीले बनी किनान से यह भय था कि वे पीछे से उन्हें हानि न पहुँचायें। अतः शैतान सुराका बिन मालिक के रूप में आया, जो बनी बक्र बिन किनान के मुखिया थे, तथा उन्होंने न केवल विजय की ही भविष्यवाणी की अपितु अपने पूर्ण समर्थन का विश्वास दिलाया। परन्तु जब फ़रिश्तों को उसने देखा तो उसे अल्लाह की सहायता दृष्टिगोचर हुई, तो एड़ियों के बल भाग खड़ा हुआ।

[2]अल्लाह का भय उसके दिल में क्या होना था ? परन्तु उसे पूर्ण विश्वास हो गया था कि अल्लाह की विशेष सहायता मुसलमानों के साथ है। मूर्तिपूजक उनके सम्मुख नहीं ठहर सकेंगे।

[3]सम्भव है कि यह शैतान के कथन का भाग हो तथा यह भी सम्भव है कि यह अल्लाह तआला की ओर से वाक्य की पुनरावृति हो।

[4]इससे तात्पर्य या तो वह मुसलमान हैं, जो नये-नये मुसलमान हुए थे तथा मुसलमानों की सफलता पर उन्हें संदेह था, अथवा इससे तात्पर्य मूर्तिपूजक हैं तथा यह भी सम्भव है कि मदीने के निवासी यहूदी तात्पर्य हों।

[5]अर्थात उनकी संख्या तो देखो तथा संसाधन की जो दशा है, वह भी स्पष्ट है। परन्तु वह मुक़बिला करने चलें हैं मक्का के मूर्तिपूजकों से, जो संख्या में कहीं अधिक हैं तथा हर प्रकार के अस्त्र-शस्त्र से तथा साधन से भरपूर हैं। लगता है कि उनके धर्म ने उनको धोखे में डाल दिया है। तथा यह मोटी सी बात भी उनकी समझ में नहीं आ रही है।

فَإِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٤٩﴾

अल्लाह तआला निःसंदेह प्रभावशाली तथा विज्ञाता है ।[1]

وَلَوْ تَرَىٰ إِذْ يَتَوَفَّى الَّذِينَ كَفَرُوا الْمَلَائِكَةُ يَضْرِبُونَ وُجُوهَهُمْ وَأَدْبَارَهُمْ وَذُوقُوا عَذَابَ الْحَرِيقِ ﴿٥٠﴾

(५०) तथा काश कि तू देखता जबकि यमदूत विश्वासहीनों की प्राण निकालते हैं, उनके मुख तथा कमर पर मार मारते हैं (तथा कहते हैं) तुम जलने की यातना का स्वाद चखो ।[2]

ذَٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيكُمْ وَأَنَّ اللَّهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيدِ ﴿٥١﴾

(५१) यह उन कर्मों के कारण जो तुम्हारे हाथों ने पूर्व ही भेज रखा है, निःसंदेह अल्लाह (तआला) अपने भक्तों पर तनिक अत्याचार नहीं करता ।[3]

---

[1]अल्लाह तआला ने फ़रमाया, "भौतिक वादियों को उन ईमानवालों के साहस तथा विश्वास का क्या अनुमान हो सकता है जिनकी पूर्ण आस्था अल्लाह में है, जो प्रभावशाली भी है अर्थात अपने आश्रितों को अल्लाह असहाय नहीं छोड़ता तथा विज्ञाता है उस के प्रत्येक कर्म में कूटनीति होती है, जिसके बोध से मनुष्य की समझ विवश है ।"

[2]कुछ व्याख्याकारों ने इसे बद्र के युद्ध में हत मूर्तिपूजकों के विषय में बताया है । आदरणीय इब्ने अब्बास फ़रमाते हैं कि जब मूर्तिपूजक मुसलमानों की ओर आते तो मुसलमान उन्के मुखों पर तलवारें मारते, जिससे बचने के लिए वे पीठ फेर कर भागते, तो फ़रिश्ते उनके पिछले भाग पर तलवार मारते । परन्तु यह साधारण आयत है कि जो प्रत्येक काफ़िर तथा मूर्तिपूजक को सम्मिलित किये हुए है । तथा अर्थ है कि मृत्यु के समय फ़रिश्ते उनके मुख तथा पीठ के उर्धव भाग पर मारते हैं, जिस प्रकार सूरः अल-अनाम में भी फ़रमाया गया है कि

﴿وَالْمَلَائِكَةُ بَاسِطُوا أَيْدِيهِمْ﴾

"फ़रिश्ते उन्हें मारने के लिए हाथ बढ़ाते हैं ।"(सूरः अल-अनाम-९३)

तथा कुछ के निकट फ़रिश्तों की यह मार प्रलय के दिन नरक की ओर ले जाते समय होगी तथा नरक का अधिकारी कहेगा कि अब "तुम डाह की यातना का स्वाद चखो ।"

[3]यह चोट तथा यातना तुम्हारे कर्मों के परिणाम स्वरूप है, वरन् अल्लाह अपने भक्तों पर अत्याचार तथा अन्याय करने वाला नहीं है, अपितु वह तो न्यायकारी हर प्रकार के

كَدَأْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

(५२) फ़िरऔन के अनुयायियों की दशा के समान तथा उनके पूर्वजों के,[1] कि उन्होंने अल्लाह की आयतों के प्रति अविश्वास किया तो अल्लाह ने उनके पापों के कारण उन्हें पकड़ लिया। अल्लाह (तआला) नि:संदेह शक्तिशाली तथा गंभीर यातना वाला है।

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً اَنْعَمَهَا عَلٰى قَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوْا مَا بِاَنْفُسِهِمْ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝

(५३) ये इसलिए कि अल्लाह (तआला) ऐसा नहीं कि किसी समुदाय पर कोई कृपा कर के फिर बदल दे, जब तक कि वह स्वयं अपनी उस स्थिति को न बदल दें, जो कि उनकी अपनी थी।[2] तथा यह कि अल्लाह तआला सुनने वाला जानने वाला है।

अत्याचार तथा अन्याय से पवित्र है। हदीस क़ुदसी में भी है (हदीस क़ुदसी वह है जो प्रकाशना का भाग न हो परन्तु मुसलमानों के लिए आवश्यक हो उसे अल्लाह तआला आदरणीय जिब्रील के द्वारा मोहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बतायें)। अल्लाह तआला फ़रमाता है :

"हे मेरे भक्तो ! मैं ने अपने ऊपर अत्याचार निषेध कर लिया है तथा मैंने उसे तुम्हारे मध्य भी निषेध किया है। अतएव तुम एक-दूसरे पर अत्याचार न करो। हे मेरे भक्तो ! ये तुम्हारे ही कर्म हैं जिनकी गणना मैंने कर रखी है। अत: जो अपने कर्मों में भलाई पाये तो अल्लाह की महीमा का वर्णन करे तथा जो इसके विपरीत पाये, वह स्वयं अपने ही को बुरा कहे।" (सहीह मुस्लिम किताबुल बिर्र बाब तहरीमुज़ जुल्म)

[1] دأب दाब का अर्थ है आदत (व्यवहार) अक्षर काफ़ उपमा के लिए है। अर्थात उन मूर्तिपूजकों की आदत अथवा हाल अथवा व्यवहार ही ऐसा था कि अल्लाह के पैग़म्बरों को झुठलाते, उसी प्रकार जिस प्रकार फ़िरऔन तथा उसके पूर्व के झूठ बोलने वालों की आदत अथवा हाल था।

[2] इसका अर्थ यह है कि जब तक कोई समुदाय कृतघ्नता का मार्ग अपना कर तथा अल्लाह तआला द्वारा निर्देशित निषेधों से मुख मोड़ कर अपनी दशाओं एवं व्यवहारों को बदल नहीं लेती अल्लाह तआला उस पर अपने सुख-सुविधाओं एवं कृपा के द्वार बन्द नहीं करता। अन्य शब्दों में अल्लाह तआला पापों के कारण अपनी कृपायें समाप्त कर

(५४) फ़िरऔन के वर्ग तथा उनके पूर्व के जनों के समतुल्य कि उन्होंने अपने पोषक की बातों को झुठलाया तो हम ने उनके पापों के कारण उन्हें ध्वस्त कर दिया और फ़िरऔन वालों को डुबो दिया तथा यह सभी अत्याचारी थे ।[1]

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِ رَبِّهِمْ فَاَهْلَكْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ وَاَغْرَقْنَاۤ اٰلَ فِرْعَوْنَ ۚ وَكُلٌّ كَانُوْا ظٰلِمِيْنَ ﴿٥٤﴾

(५५) सभी जीवों से बुरे अल्लाह के निकट वह हैं जो कुफ़्र करें फिर वह ईमान न लायें ।[2]

اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۖ ﴿٥٥﴾

(५६) जिनसे आपने वचन लिया, फिर भी वे अपना वचन हर बार तोड़ते हैं तथा कदापि संयम नहीं बरतते ।[3]

اَلَّذِيْنَ عٰهَدْتَّ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَهُمْ فِيْ كُلِّ مَرَّةٍ وَّهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ ﴿٥٦﴾

देता है तथा अल्लाह तआला की कृपा का पात्र होने के लिए आवश्यक है कि पापों से बचा जाय। अर्थात परिवर्तन से तात्पर्य है कि समुदाय पापों को त्याग कर अल्लाह की आज्ञा का पालन करने लगे।

[1]यह इसी बात पर पुनः बल दिया गया है, जो पूर्व गुजर चुकी है। परन्तु इसमें विनाश की अवस्था का वर्णन अधिक है कि उन्हें डुबो दिया गया। इसके अतिरिक्त यह स्पष्ट कर दिया गया कि अल्लाह ने उनको डूबो कर अत्याचार नहीं किया, अपितु ये स्वयं ही अपने प्राणों पर अत्याचार कर रहे थे। अल्लाह तो किसी पर अत्याचार नहीं करता। ﴿وَمَا رَبُّكَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ﴾ (सूरः हाम मीम सज्दः ४६)

[2]شرّ النّاس (लोगों में सबसे बुरे) कहने की जगह شرّ الدّاوب कहा गया है। जो भाषा के आधार पर मनुष्य तथा चौपाये जीवों आदि सब के लिए प्रयोग होता है। लेकिन समान्यरूप से चौपायों के लिए प्रयोग होता है। अर्थात काफ़िरों का सम्बन्ध मनुष्यों से नहीं कृतघ्नता कर के पशु अपितु पशुओं से भी बुरे पशु बन गये।

[3]यह काफ़िरों ही के एक व्यवहार का वर्णन है कि हर बार वचन तोड़ने का कार्य करते हैं तथा उसके परिणाम से तनिक भी भयभीत नहीं होते। कुछ लोगों ने इससे यहूदियों के वंश बनू कुरैज़ा का भावार्थ लिया है, जिनसे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की यह सन्धि थी कि वे मूर्तिपूजकों की सहायता नहीं करेंगे, परन्तु उन्होंने इसे नहीं निभाया ।

فَإِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِم مَّنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿٥٧﴾

(५७) अत: जब कभी तू उन पर लड़ाई में प्रभावी हो जाओ तो उन्हें ऐसी मार मारो कि उनके अनुगामी भी भाग खड़े हों।[1] सम्भवत: वह शिक्षा प्राप्त कर लें।

وَإِمَّا تَخَافَنَّ مِن قَوْمٍ خِيَانَةً فَانبِذْ إِلَيْهِمْ عَلَىٰ سَوَاءٍ ۚ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْخَائِنِينَ ﴿٥٨﴾

(५८) तथा यदि तुझे किसी समुदाय से विश्वासघात का भय हो तो समानता की अवस्था में उन की सन्धि तोड़ दे।[2] अल्लाह विश्वासघातियों को प्रिय नहीं रखता।[3]

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَبَقُوا ۚ إِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُونَ ﴿٥٩﴾

(५९) तथा काफ़िर यह विचार न करें कि वे भाग निकले, नि:संदेह वे विवश नहीं कर सकते।

---

[1] شَرِّدْ بِهِم का अर्थ है कि उनको ऐसी मार मारो कि जिससे उनके समर्थकों तथा साथियों में भगदड़ मच जाये, यहाँ तक कि वह आपकी ओर इस सम्भावना से मुख ही न करें कि कहीं उनका भी वही परिणाम न हो जो उनके अग्रगामियों का हुआ।

[2]विश्वासघात से तात्पर्य है जिस समुदाय से सन्धि हुई उससे यह भय कि वह सन्धि भंग कर दे। तथा على سواء (समानता की अवस्था में) का अर्थ है कि उन्हें उचित रूप से सूचित कर दो कि भविष्य में हमारे तुम्हारे मध्य कोई सन्धि नहीं। ताकि दोनों पक्ष अपनी-अपनी सुरक्षा के स्वयं उत्तरदायी हों, कोई एक पक्ष अज्ञान वश तथा धोखे में मारा न जाये।

[3]अर्थात यह सन्धि भंग यदि मुसलमानों की ओर से भी हो, तो भी यह विश्वासघात है, अर्थात जिसे अल्लाह तआला प्रेम नहीं करता। आदरणीय मुआविया (رضي الله عنه) तथा रूमियों के मध्य सन्धि थी। जब सन्धि की अवधि समाप्त होने के निकट आयी तो आदरणीय मुआविया (رضي الله عنه) ने रूम की धरती के निकट अपनी सेनायें एकत्रित करनी प्रारम्भ कर दीं उद्देश्य यह था कि सन्धि की अवधि समाप्त होते ही रूमियों पर आक्रमण कर दिया जाय। एक सहाबी अम्र बिन अबस: के ज्ञान में आदरणीय मुआविया की यह तैयारियाँ आईं तो इसे विश्वाघात कहा तथा ईशदूत (उन पर परमेश्वर की दया एवं शान्ति हो) का एक कथन प्रस्तुत करके उसे संधि भंग बताया, जिस पर आदरणीय मुआविया (رضي الله عنه) ने अपनी सेनाऐं वापस बुला लीं। (मुसनद अहमद भाग ५, पृ०१११, अबू दाऊद किताबुल जिहाद)

وَأَعِدُّوا لَهُم مَّا اسْتَطَعْتُم مِّن قُوَّةٍ وَمِن رِّبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُونَ بِهِ عَدُوَّ اللَّهِ وَعَدُوَّكُمْ وَآخَرِينَ مِن دُونِهِمْ لَا تَعْلَمُونَهُمُ اللَّهُ يَعْلَمُهُمْ ۚ وَمَا تُنفِقُوا مِن شَيْءٍ فِي سَبِيلِ اللَّهِ يُوَفَّ إِلَيْكُمْ وَأَنتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٦٠﴾

(६०) तथा उनसे (लड़ने के) लिये अपने सामर्थ्य भर शक्ति तैयार करो तथा घोड़े तैयार रखने की भी,[1] कि उस से तुम अल्लाह के शत्रुओं को भयभीत कर सको तथा उनके अतिरिक्त अन्यों को भी, जिन्हें तुम नहीं जानते, अल्लाह उन्हें भली-भाँति जान रहा है, तथा जो कुछ भी अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करोगे, वह तुम्हें पूरा-पूरा दिया जायेगा तथा तुम्हारे अधिकारों का हनन नहीं किया जायेगा।

وَإِن جَنَحُوا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ ۚ إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٦١﴾

(६१) तथा यदि वे सन्धि की ओर झुकें, तो तू भी सन्धि की ओर झुक जा तथा अल्लाह पर भरोसा रख।[2] निःसंदेह वह सुनने वाला जानने वाला है।

---

[1] قوّة की व्याख्या नबी करीम के कथनानुसार वाण चलाना है, (सहीह मुस्लिम किताबुल इमारः तथा अन्य हदीस की पुस्तकें) क्योंकि उस समय यह बहुत बड़ा युद्ध का हथियार था तथा अत्यन्त महत्वपूर्ण शिक्षा थी, जिस प्रकार घोड़े युद्ध के लिए अति आवश्यक थे, जैसाकि इस आयत से भी स्पष्ट होता है परन्तु अब तीर चलाने तथा घोड़े की युद्ध में इतनी आवश्यकता तथा महत्व नहीं रहा। इसलिए ﴿وَأَعِدُّوا لَهُم مَّا اسْتَطَعْتُم﴾ के अधीन आज कल के आधुनिक हथियार आते हैं (जैसे- मिज़ाईल, टैंक, बम, तथा युद्ध के विमान तथा पोत तथा युद्ध के लिए पनडुब्बियाँ आदि) जिनकी तैयारी आवश्यक है।

[2]अर्थात यदि परिस्थितियाँ युद्ध की अपेक्षा शान्ति के पक्ष में हों तथा शत्रु भी सन्धि करना चाहे तो सन्धि कर लेना कोई अनुचित नहीं। यदि सन्धि से शत्रु का उद्देश्य छल तथा धोखा देना हो तो भी चिन्ता की आवश्यकता नहीं, अल्लाह पर भरोसा रखो, निःसंदेह अल्लाह शत्रु के छल तथा षड़यन्त्र से भी सुरक्षित रखेगा, तथा वह आप के लिए पर्याप्त है। परन्तु सन्धि की यह आज्ञा उस परिस्थिति में है जब मुसलमानों की शक्ति क्षीण हो तथा सन्धि में इस्लाम तथा मुसलमानों का लाभ हो परन्तु जब परिस्थिति इसके विपरीत हो, मुसलमान शक्ति तथा साधन में श्रेष्ठ हों तथा काफ़िरों की शक्ति क्षीण हो तथा अपमानित हो तो इस परिस्थिति में सन्धि के बजाय काफ़िरों की शक्ति तथा गर्व को तोड़ना आवश्यक है। (सूरः मोहम्मद-३५) ﴿وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ كُلُّهُ لِلَّهِ﴾ (सूरः अल-अंफाल-३९)

وَإِنْ يُرِيدُوٓا۟ أَن يَخْدَعُوكَ فَإِنَّ حَسْبَكَ ٱللَّهُ ۚ هُوَ ٱلَّذِىٓ أَيَّدَكَ بِنَصْرِهِۦ وَبِٱلْمُؤْمِنِينَ ﴿٦٢﴾

(६२) तथा यदि वे तुझसे विश्वासघात करना चाहेंगे. । तो अल्लाह तुझे बस है, उसी ने अपनी सहायता से तथा ईमानवालों से तेरा समर्थन कराया है।

وَأَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِهِمْ ۚ لَوْ أَنفَقْتَ مَا فِى ٱلْأَرْضِ جَمِيعًا مَّآ أَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوبِهِمْ وَلَـٰكِنَّ ٱللَّهَ أَلَّفَ بَيْنَهُمْ ۚ إِنَّهُۥ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٦٣﴾

(६३) तथा उन के दिलों में परस्पर प्रेम भी उसी ने उत्पन्न किया है। यदि आप धरती की सभी वस्तुऐं व्यय कर देते तो भी उनके दिलों में प्रेम की भावना नहीं उत्पन्न कर सकते थे[1] परन्तु अल्लाह ही ने उनके दिलों

---

[1]इन आयतों में अल्लाह तआला ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तथा ईमानवालों पर जो उपकार किये उनमें से एक बड़े उपकार का वर्णन किया है वह यह कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ईमानवालों के द्वारा सहायता की, वे आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दाहिने हाथ तथा रक्षक एवं सहायक बन गये। ईमानवालों पर यह उपकार किया कि इससे पूर्व जो उनमें दुश्मनी थी, उसे प्रेम में परिवर्तित कर दिया। पहले वे एक दूसरे के रक्त के प्यासे थे, परन्तु अब परस्पर मोहित हो गये। पहले उन में हार्दिक शत्रुता थी, परन्तु अब आपस में प्रेमी तथा मित्र बन गये, सदियों पुराने वैमनस्य को इस प्रकार समाप्त कर, आपसी प्रेम भाव उत्पन्न कर देना, यह अल्लाह तआला की विशेष कृपा थी, तथा उसकी सामर्थ्य तथा इच्छा का प्रभाव था अन्यथा यह ऐसा कार्य था कि संसार भर के कोष व्यय करके भी यह अमूल्य रत्न प्राप्त न होता। अल्लाह तआला ने अपने इस उपकार को सूर: आले इमरान की आयत संख्या १०३ में फ़रमाया है ﴿إِذْ كُنتُمْ أَعْدَآءً فَأَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِكُمْ﴾ तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी हुनैन के परिहार के विभाजित के अवसर पर अन्सार को सम्बोधित करते हुए फ़रमाया, "हे अन्सार के गुट ! क्या यह सत्य नहीं कि तुम भटके हुए थे, अल्लाह ने मेरे माध्यम से तुम्हें मार्गदर्शन प्रदान किया, तुम निर्धन थे अल्लाह ने तुम्हें मेरे माध्यम से खुशहाली प्रदान की तथा तुम एक-दूसरे से पृथक-पृथक थे, अल्लाह ने मेरे माध्यम से तुम्हें आपस में जोड़ दिया।" नबी सल्लाहु अलैहि वसल्लम जो भी बात कहते अन्सार उसके उत्तर में यही कहते. «اللهُ وَرَسُولُهُ أَمَنُّ» ("अल्लाह तथा उसके रसूल के उपकार इससे कहीं अधिक हैं।" (सहीह बुख़ारी किताबुल मग़ाज़ी बाब गज़वतुत तायेफ़ सहीह मुस्लिम किताबुल ज़कात बाब ऐताऊल मुअल्लिफते कुलूबुहुम अलल इस्लाम)

में प्रेम डाल दिया निःसन्देह वह प्रभावी विज्ञाता है।

(६४) हे नबी (ईशदूत) आप तथा आप के अनुयायी मुसलमानों को अल्लाह बस है।

يَاَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٦٤﴾

(६५) हे ईशदूत ! मुसलमानों को जिहाद (धर्मयुद्ध) का प्रलोभन दो।[1] यदि तुम में से बीस धैर्यवान भी होंगे, तो भी दो सौ पर प्रभावी रहेंगे। तथा यदि तुम में से एक सौ होंगे तो एक हज़ार काफ़िरों पर प्रभावी रहेंगे।[2] इस कारण कि वे अज्ञानी लोग हैं।

يَاَيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلَى الْقِتَالِ ؕ اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ عِشْرُوْنَ صٰبِرُوْنَ يَغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ﴿٦٥﴾

(६६) अच्छा अब अल्लाह तुम्हारा बोझ हल्का करता है, वह भली-भाँति जानता है कि तुम में निर्बलता है, तो यदि तुम में से एक सौ धैर्यवान होंगे, तो वे दो सौ पर प्रभावी रहेंगे

اَلْـٰٔنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيْكُمْ ضَعْفًا ؕ فَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ صَابِرَةٌ يَّغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ

---

[1] تحريض तहरीद का अर्थात प्रलोभन देने में अति करना अर्थात उत्तेजित करना एवं भड़काना है अतः तदानुसार ईशदूत युद्ध से पूर्व सहाबा को जिहाद (धर्मयुद्ध) का प्रलोभन देते थे तथा उस के महत्व की चर्चा करते जैसा कि "बद्र" के अवसर पर जब मूर्तिपूजक अपनी भारी संख्या तथा भरपूर संसाधनों के साथ रणक्षेत्र में उपस्थित हो गये तो आप ने फ़रमाया "ऐसी स्वर्ग में प्रवेश के लिये तैयार हो जाओ जिस का विस्तार आकाशों एवं धरती के समतुल्य है।" एक सहाबी उमैर पुत्र हमाम ने कहा आकाशों एवं धरती की चौड़ाई के बराबर ? आप ने फ़रमाया "हाँ" इस पर उन्होंने बख़, बख़ कहा अर्थात प्रसन्नता व्यक्त की तथा यह आशा व्यक्त की मैं भी स्वर्गगामियों में रहूँगा, आप ने फ़रमाया, तुम स्वर्गगामियों में होगे। फिर अपनी तलवार की खोल तोड़ दी और कुछ खजूरें निकाल कर खाने लगे। फिर शेष फेंक दी तथा कहा इन के खाने तक जीवित रहा तो यह लम्बी आयु होगी फिर आगे बढ़े एवं साहस दिखाने लगे यहाँ तक कि शहीद (बलिदान) हो गये। (सहीह मुस्लिम किताबुल इमारा अध्याय स्वर्ग का प्रमाण शहीद हेतु)

[2] यह मुसलमानों के लिए शुभ सूचना है कि तुम्हारे दृढ़ता से लड़ने वाले २० सैनिक दो सौ पर तथा सौ एक हज़ार पर प्रभावशाली रहेंगे।

وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ اَلْفٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفَيْنِ بِاِذْنِ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿٦٦﴾

तथा यदि तुम में से एक हज़ार होंगे तो, वह अल्लाह के आदेश से दो हज़ार पर प्रभावी रहेंगे।[1] तथा अल्लाह (तआला) धैर्यवानों के साथ है।[2]

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَّكُوْنَ لَهٗٓ اَسْرٰى حَتّٰى يُثْخِنَ فِى الْاَرْضِ ؕ تُرِيْدُوْنَ عَرَضَ الدُّنْيَا ۖ وَاللّٰهُ يُرِيْدُ الْاٰخِرَةَ ؕ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٦٧﴾

(६७) नबी के हाथ में बन्दी नहीं चाहिए, जब तक कि देश में हिंसक युद्ध न हो जाये। तुम तो दुनिया के धन चाहते हो तथा अल्लाह का विचार परलोक का है।[3] तथा अल्लाह तआला प्रभावशाली विज्ञाता है।

---

[1]पिछला आदेश सहाबा पर भारी हुआ, क्योंकि इसका अर्थ था, एक मुसलमान दस काफ़िरों के लिए बीस दो सौ के लिए तथा एक सौ एक हज़ार के लिए पर्याप्त है। तथा काफ़िरों के सापेक्ष मुसलमानों की इतनी संख्या हो तो धर्मयुद्ध अनिवार्य तथा इससे बचना अनुचित है। अत: अल्लाह तआला ने कमी करके एक और दस के अनुपात को एक और दो का अनुपात कर दिया। (सहीह बुख़ारी तफ़सीर सूर: अल-अंफाल) अब इस अनुपात पर धर्म युद्ध आवश्यक तथा इससे कम पर अनावश्यक है।

[2]यह कह कर धैर्य एवं साहस से लड़ने के महत्व पर बल दिया कि अल्लाह की सहायता के लिये इस का तत्वाधान आवश्यक है।

[3]बद्र के रण में सत्तर मूर्तिपूजक हत हुये एवं इसी संख्या में बंदी बनाये गये। यह इस्लाम एवं अधर्म के बीच प्रथम रण था, अत: बंदियों के विषय में क्या नीति हो इस संदर्भ में आदेश पूर्ण रूपेण स्पष्ट न थे अत: ईशदूत ने इस विषय में परामर्श लिया कि उन्हें हत किया जाये अथवा प्रतिशोध में धन लेकर मुक्त कर दिया जाये। उचित की परिधि में दोनों का ही अवकाश था अत: दोनों विचारधीन आईं किन्तु कुछ अवसर पर उचितोचित से अलग स्थितियों तथा समय अनुसार अधिक उत्तम नीति अपनाने की आवश्यकता होती है, यहाँ भी आवश्यकता अति उत्तम नीति अपनाने की थी किन्तु उचित को देखते हुए न्यूनतम नीति अपनाई गई जिस पर अल्लाह का क्रोध उतरा। परामर्श में आदरणीय उमर आदि का विचार था कि अधर्म के प्रभाव को तथा गर्व को तोड़ने के लिये आवश्यक है कि इन बन्दियों को हत कर दिया जाये क्योंकि यह अधर्म एवं अधर्मियों के प्रमुख हैं यह स्वतंत्र होकर मुसलमानों के विरुद्ध अधिक षड़यन्त्र रचेंगे जब कि आदरणीय अबू बक्र आदि का विचार इस के विपरीत यह था कि प्रतिशोध में धन लेकर उन्हें मुक्त कर दिया जाये तथा उस धन से आगामी युद्ध की तैयारी की

(६८) यदि पहले से ही अल्लाह की ओर से बात लिखी न होती[1] तो जो कुछ तुमने लिया है, उसके विषय में तुम्हें कोई घोर यातना होती।

لَوۡلَا كِتَٰبٞ مِّنَ ٱللَّهِ سَبَقَ لَمَسَّكُمۡ فِيمَآ أَخَذۡتُمۡ عَذَابٌ عَظِيمٞ ۝٦٨

(६९) अत: जो वैध एवं पवित्र धन लड़ाई से प्राप्त करो उसे खाओ ।[2] तथा अल्लाह से डरते रहो, नि:संदेह अल्लाह तआला अत्यधिक करूणामयी तथा कृपालु है।

فَكُلُواْ مِمَّا غَنِمۡتُمۡ حَلَٰلٗا طَيِّبٗاۚ وَٱتَّقُواْ ٱللَّهَۚ إِنَّ ٱللَّهَ غَفُورٞ رَّحِيمٞ ۝٦٩

(७०) हे नबी! अपने हाथ के नीचे के बन्दियों से कह दो कि यदि अल्लाह तआला तुम्हारे

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّبِيُّ قُل لِّمَن فِيٓ أَيۡدِيكُم مِّنَ ٱلۡأَسۡرَىٰٓ إِن يَعۡلَمِ ٱللَّهُ

जाये। ईशदूत ने इसी विचार को उचित समझा जिस पर यह आयत उतरीं जिनसे तात्पर्य यह है कि यदि देश में अधर्म का प्रभाव हो (जैसाकि उस समय अरब देश में था) तो अधर्मियों का रक्तपात करके अधर्म की शक्ति को तोड़ना आवश्यक है। इस विन्दू को त्याग कर तुम ने धन लिया है तो तुम ने उत्तम की जगह न्यूनतम की नीति अपनाई जो तुम्हारी भूल है अन्त में जब अधर्म का बल टूट गया तो मुसलमानों के राज्य प्रमुख को अधिकार दे दिया गया कि बंदियों को चाहे तो हत कर दे अथवा धन लेकर मुक्त करे या मुसलमान बंदियों से बदल ले तथा परिस्थितियों के अनुसार दास बना ले इन सभी की अनुमति है।

[1]इसमें व्याख्याकारों में मतभेद है कि यह लिखी हुई बात क्या थी ? कुछ ने कहा कि इस से तात्पर्य युद्ध में प्राप्त धन-सामग्री को अवर्जित करने का आदेश है अर्थात चूँकि यह भाग्य लेख लिखी थी कि मुसलमानों को युद्ध में प्राप्त धन-सामग्री अवर्जित होगी। इसलिए तुम ने फ़िदया ले कर उचित कार्य किया। यदि ऐसा न होता तो फ़िदया लेने के कारण तुम्हें अत्यधिक प्रकोप सहन करना पड़ता। कुछ ने बद्र में शहीद होने वालों की क्षमा-याचना इस से तात्पर्य लिया है। कुछ ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की उपस्थिति को प्रकोप न आने का कारण तात्पर्य लिये हैं आदि (विस्तार पूर्वक जानकारी के लिए देखें फ़तहुल क़दीर)

[2]इसमें युद्ध में प्राप्त माल-सामग्री को उचित तथा पवित्र ठहराकर फ़िदया को उचित होना बताया गया है जिससे इस बात का समर्थन होता है कि "लिखी हुई बात" शायद इससे तात्पर्य युद्ध में प्राप्त धन-सामग्री है।

فِيْ قُلُوْبِكُمْ خَيْرًا يُّؤْتِكُمْ خَيْرًا مِّمَّآ أُخِذَ مِنْكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ۗ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٧٠﴾

दिलों में पुण्य विचार देखेगा,[1] तो जो कुछ तुमसे लिया गया है, उससे अच्छा तुम्हें प्रदान करेगा ।[2] तथा फिर पाप भी क्षमा कर देगा तथा अल्लाह क्षमा करने वाला कृपालु है ।

وَإِنْ يُّرِيْدُوْا خِيَانَتَكَ فَقَدْ خَانُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ فَأَمْكَنَ مِنْهُمْ ۗ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿٧١﴾

(७१) तथा यदि वे तुझ से विश्वासघात का विचार करेंगे, तो यह तो इससे पूर्व स्वयं अल्लाह के साथ विश्वासघात कर चुके हैं । अन्ततः उसने उन्हें पकड़वा दिया ।[3] तथा अल्लाह तआला ज्ञान वाला हिक्मत वाला है ।

إِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَالَّذِيْنَ اٰوَوْا وَّنَصَرُوْا

(७२) जो लोग (इस्लाम) धर्म के प्रति ईमान लाये एवं हिजरत (प्रस्थान) कर गये तथा अपने धन, प्राण से अल्लाह के मार्ग में जिहाद (धर्मयुद्ध) किये ।[4] एवं जिन लोगों ने उन को शरण तथा सहायता दी,[5] यह सब परस्पर

---

[1]अर्थात ईमान तथा इस्लाम स्वीकार कर लेने का विचार तथा उसे स्वीकार करने की भावना है ।

[2]अर्थात जो फ़िदया तुमसे लिया गया है इससे अच्छा अल्लाह तआला तुम्हें इस्लाम स्वीकार करने के पश्चात प्रदान करेगा । अतः ऐसा ही हुआ । [illegible] अब्बास (رضي الله عنـــه) आदि जो उनके क़ैदियों में से थे, मुसलमान हो गये, तो उसके पश्चात अल्लाह ने उन्हें सांसारिक धन वैभव भी अधिक प्रदान किया ।

[3]अर्थात मुख से इस्लाम स्वीकार कर लें परन्तु उद्देश्य धोखा देना हो, तो इससे पूर्व उन्होंने अविश्वास तथा मिश्रण (शिर्क) कर के क्या प्राप्त किया ? यही कि वह मुसलमानों के बन्दी बन गये, इसलिए यदि भविष्य में भी अनेकेश्वरवाद के मार्ग पर स्थिर रहे तो इससे अत्यधिक अपमान के सिवाय कुछ और नहीं मिलेगा ।

[4]ये "सहाबा" मुहाजेरीन (जो मक्का नगरी त्याग कर मदीना आये) कहलाते हैं, जो महानता में सहाबा में सर्वश्रेष्ठ हैं ।

[5]ये अन्सार कहलाते हैं (ये मदीना के मूल निवासी हैं) ये श्रेष्ठता के दूसरे स्थान पर हैं ।

أُولَٰئِكَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ ۚ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَلَمْ يُهَاجِرُوا مَا لَكُم مِّن وَلَايَتِهِم مِّن شَيْءٍ حَتَّىٰ يُهَاجِرُوا ۚ وَإِنِ اسْتَنصَرُوكُمْ فِي الدِّينِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ إِلَّا عَلَىٰ قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُم مِّيثَاقٌ ۗ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٧٢﴾

एक-दूसरे के मित्र हैं।[1] तथा जो ईमान लाये किन्तु हिजरत (प्रवास) नहीं किया तुम से उनकी तनिक भी मित्रता नहीं जब तक कि वह हिजरत (देश त्याग) न करें।[2] हाँ यदि वह धर्म के विषय में तुमसे सहायता माँगें, तो तुम पर सहायता देना आवश्यक है।[3] सिवाये उन लोगों के कि तुम्हारे तथा उनके बीच संप्रतिज्ञा है।[4] तथा जो भी तुम कर रहे हो अल्लाह भली प्रकार देख रहा है।

وَالَّذِينَ كَفَرُوا بَعْضُهُمْ أَوْلِيَاءُ بَعْضٍ ۚ إِلَّا تَفْعَلُوهُ تَكُن فِتْنَةٌ فِي الْأَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيرٌ ﴿٧٣﴾

(७३) तथा विश्वासहीन परस्पर एक-दूसरे के मित्र हैं, यदि तुम ने ऐसा न किया तो देश में आतंक होगा तथा घोर उत्पात उत्पन्न हो जायेगा।[5]

---

[1]अर्थात एक-दूसरे के सहायक तथा पक्षधर हैं। तथा कुछ ने कहा कि परस्पर के उत्तराधिकारी हैं जैसा कि हिजरत के पश्चात नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक-एक मुहाजिर तथा एक-एक अंसार के मध्य भाई चारा करा दिया था। यहाँ तक कि वे एक-दूसरे के उत्तराधिकारी भी बनते थे। (बाद में उत्तराधिकारी का आदेश निरस्त कर दिया गया)

[2]यह सहाबा की तीसरी श्रेणी है जो मुहाजिर तथा अंसार के अतिरिक्त हैं। ये मुसलमान होने के पश्चात अपने ही क्षेत्र तथा जाति में रहते थे। इसलिए फ़रमाया कि तुम्हारे पक्ष अथवा उत्तराधिकार के वे अधिकारी नहीं।

[3]मूर्तिपूजकों के विरुद्ध सहायता मांगे तो फिर उनकी सहायता करनी आवश्यक है।

[4]हाँ यदि वह तुम से ऐसे समुदाय के विरूद्ध सहायता माँगे जिस के तथा तुम्हारे मध्य संधि एवं युद्ध न करने की संप्रतिज्ञा हो तो फिर मुसलमानों की सहायता की अपेक्षा संविदा का पालन आवश्यक है।

[5]अर्थात जिस प्रकार अधर्मी परस्पर मित्र एवं पक्षधर हैं उसी प्रकार यदि तुम भी ईमान के आधार पर परस्पर पक्षपात तथा कृतघ्नों से सम्बन्ध विच्छेद न रखा तो, फिर बड़ा उपद्रव होगा। और वह यह कि ईमानवालों तथा काफ़िरों में आपसी मेल-मिलाप से

وَالَّذِينَ آمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ آوَوا وَّنَصَرُوا أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا ۚ لَّهُم مَّغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ﴿٧٤﴾

(७४) जो लोग ईमान लाये तथा प्रवास किये एवं अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध किये तथा जिन्होंने आश्रय दिया तथा सहायता पहुँचायी। यही लोग सच्चे ईमानवाले हैं, उनके लिए क्षमा तथा ससम्मान जीविका है।[1]

وَالَّذِينَ آمَنُوا مِن بَعْدُ وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا مَعَكُمْ فَأُولَٰئِكَ مِنكُمْ ۚ وَأُولُو الْأَرْحَامِ بَعْضُهُمْ أَوْلَىٰ بِبَعْضٍ فِي كِتَابِ اللَّهِ ۗ إِنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٧٥﴾

(७५) तथा जो लोग इसके पश्चात ईमान लाये तथा प्रवास किये तथा तुम्हारे साथ होकर धर्मयुद्ध किये। तो यह लोग भी तुम में से ही हैं।[2] तथा जाति सम्बन्धी वाले उनमें से परस्पर एक-दूसरे के अधिक समीपवर्ती हैं अल्लाह के आदेश में,[3] नि:संदेह अल्लाह सर्वज्ञ है।

धर्म के सम्बन्ध में शंका तथा आलस्य उत्पन्न होगा। कुछ ने ﴿بَعْضُهُمْ أَوْلَىٰ بِبَعْضٍ﴾ से उत्तराधिकारी होना भाव निकाला है तथा अर्थ यह है कि एक मुसलमान काफ़िर का तथा काफ़िर मुसलमान का उत्तराधिकारी नहीं हो सकता। जैसाकि हदीस में इसको अधिक स्पष्ट रूप से समझाया गया है। यदि तुम उत्तराधिकार में कुफ़्र तथा ईमान पर ध्यान न देकर मात्र जाति संबन्ध को समक्ष रखोगे, तो इससे बड़ा उत्पात तथा अशांति पैदा होगी।

[1]यह उपरोक्त मुहाजेरीन तथा अंसार के दो गुटों की चर्चा है, जिसका वर्णन पहले गुज़र चुका है। यहाँ पुन: वर्णन उनकी प्रधानता व्यक्त करने के लिए है। जब कि उनकी पूर्व चर्चा परस्पर सहायता एवं पक्षपात की अनिवार्यता के वर्णन के लिए थी।

[2]यह एक चौथे गुट की चर्चा है, जो श्रेष्ठता में पहले दो गुटो के पश्चात तथा तीसरे गुट, जिन्होंने हिजरत नहीं की थी से प्रथम है।

[3]भाईचारे तथा शपथ के आधार पर उत्तराधिकार में जो भागीदार बनते थे। इस आयत में उसे निरस्त कर दिया गया है अब उत्तराधिकारी वही होगा जो जिसका वंशीय अथवा ससुराली सम्बन्ध होगा। अल्लाह की किताब अथवा अल्लाह के आदेश से तात्पर्य है कि 'सुरक्षित पुस्तक' में मूल आदेश यही था। परन्तु भाईचारे के आधार पर अस्थाई रूप से एक-दूसरे को उत्तराधिकारी बना दिया गया था, जो अब आवश्यकता समाप्त हो जाने के पश्चात अनावश्यक हो गया तथा मूल आदेश लागू कर दिया गया।

सूरतुत्तौब:-९

سُوْرَةُ التَّوْبَةِ

सूर: तौब: * मदीने में उतरी तथा इसमें एक सौ उनत्तीस आयतें एव सोलह रुकूअ हैं।

بَرَآءَةٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى الَّذِيْنَ عٰهَدْتُّمْ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ①

(१) (यह) अल्लाह एवं उसके रसूल (दूत) की ओर से विमुक्ति की घोषणा है[1] उन मिश्रण-वादियों के संबन्ध में जिन से तुम ने संप्रतिज्ञा (मुआहद:) की है।

فَسِيْحُوْا فِى الْاَرْضِ اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ

(२) अत: (हे मिश्रणवादियो !) तुम देश में चार महीने यातायात कर लो[2] तथा जान लो

(*) **नामकरण के कारण :-** इसके व्याख्याकारों ने कई नामों का वर्णन किया है, परन्तु अधिक प्रसिद्ध दो नाम हैं प्रथम 'तौबा' इस लिए कि इसमें ईमानवालों की तौबा स्वीक़ार होने का वर्णन है। द्वितीय नाम 'बराअत' है। इसलिए कि इसमें मूर्तिपूजकों से सन्धि से मुक्ति की घोषणा की गयी है। यह क़ुरआन मजीद की एक ही सूर: है जिसके प्रारम्भ में बिस्मिल्लाह हिर्रहमानिर्रहीम नहीं लिखा है इसके भी विभिन्न कारण भाष्य पुस्तकों में लिखे हुए हैं। परन्तु अधिक उचित बात यह लगती है कि सूर: अंफ़ाल तथा सूर: तौबा इन दोनों के विषय में समानता पायी जाती है अत: यह सूर: अंफ़ाल की पूरक अथवा शेष है। यह सात बड़ी सूरतों में से सातवीं बड़ी सूर: है, जिन्हें सबआ तिवाल कहा जाता है।

[1]मक्का विजय के पश्चात ९ हिजरी में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आदरणीय अबू बक्र, आदरणीय अली (رضي الله عنهما) तथा अन्य कुछ सहचरों को यह आयतें तथा आदेश दे कर भेजा ताकि वह मक्के में उनको जन-सामान्य के समक्ष घोषित कर दें। उन्होंने आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आदेशानुसार घोषणा कर दी कि कोई व्यक्ति अब (काबा) की नंगी परिक्रमा नहीं कर सकेगा। बल्कि अगले वर्ष से किसी मूर्तिपूजक को बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) के हज की आज्ञा नहीं प्रदान की जायेगी। (सहीह बुख़ारी संख्या १३६९, मुस्लिम संख्या ९८३)

[2]यह मुक्ति की घोषणा उन मूर्तिपूजकों के लिए थी जिन से बिना अवधि की सन्धियाँ थीं अथवा चार महीने से कम की थीं अथवा जिनसे चार महीने अथवा उससे अधिक की तो थीं, परन्तु उनकी ओर से सन्धि के नियमों का पालन नहीं हो रहा था। उन सभी को चार महीने की अवधि तक मक्का में निवास का समय दे दिया गया। इसका अर्थ यह था कि यदि यह चार महीने के अन्दर इस्लाम धर्म स्वीकार कर लें, तो उन्हें यहाँ रहने

وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكٰفِرِيْنَ ۝٢

कि तुम अल्लाह को विवश नहीं कर सकते तथा अल्लाह विश्वासहीनों को निरादर करने वाला है ।[1]

وَاَذَانٌ مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖٓ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ اَنَّ اللّٰهَ بَرِيْٓءٌ مِّنَ الْمُشْرِكِيْنَ ۙ وَرَسُوْلُهٗ ۭ فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ ۭ وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝٣

(३) अल्लाह एवं उस के रसूल (दूत) की ओर से महा हज के दिन [2] स्पष्ट घोषणा है कि अल्लाह मिश्रणवादियों से असंतुष्ट है तथा उसका दूत भी, यदि अब भी तुम क्षमा-याचना कर लो तो तुम्हारे लिये उत्तम है तथा यदि तुम मुख फेरो तो जान लो कि तुम अल्लाह को विवश नहीं कर सकोगे तथा विश्वासहीनों (काफिरों) को घोर यातना का शुभ समाचार दे दो ।

की आज्ञा होगी अन्यथा उनके लिये यह आवश्यक होगा कि वे अरब महाद्वीप से निकाल जायें । यदि इन दोनों नियमों में से वे कोई भी नहीं अपनाते हैं, तो उनकी गणना उन काफ़िरों में होगी जिनसे लड़ना मुसलमानों के लिए आवश्यक होगा, ताकि अरब महाद्वीप अनेकेश्वरवाद तथा मूर्तिपूजा से पवित्र हो जाये ।

[1]अर्थात यह समय इसलिए नही दिया जा रहा है कि इस समय तुम्हारे विरुद्ध कार्यवाही सम्भव नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य भी तुम्हारी भलाई तथा लाभ है, जो तौबा करके मुसलमान होना चाहे, तो वह मुसलमान हो जाये । वरन् याद रखो कि तुम्हारे लिए अल्लाह ने अपने विवेक से भाग्य में लिख दिया है, उसे तुम टाल नहीं सकते तथा अल्लाह की ओर से उतारे गये अपमान तथा अनादर से तुम बच नहीं सकते ।

[2]सहीह बुख़ारी तथा मुस्लिम तथा अन्य सहीह हदीस की किताबों से सिद्ध है कि हज अकबर के दिन से तात्पर्य योमुन्नहर (अर्थात १० ज़िलहिज्जा) का दिन है । (त्रिमिज़ी संख्या ९५७ बुख़ारी संख्या ४६५५, मुस्लिम संख्या ९८२) उसी दिन मिना के स्थान पर मुक्ति की घोषणा की गयी । १० ज़िलहिज्जा को हज अकबर इसलिए कहा जाता है कि इस दिन हज की सबसे अधिक तथा विशेष धार्मिक रीतियों को अदा किया जाता है । तथा जन मानस उमरे को हज असग़र कहा करते थे । इसलिए उमरे से श्रेष्ठ करने के लिए हज को महा हज (अकबर) कहा गया । लोगों में जो यह प्रसिद्ध है कि शुक्रवार को आये वह हज अकबर है, निराधार है ।

إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدتُّم مِّنَ الْمُشْرِكِينَ ثُمَّ لَمْ يَنقُصُوكُمْ شَيْئًا وَلَمْ يُظَاهِرُوا عَلَيْكُمْ أَحَدًا فَأَتِمُّوا إِلَيْهِمْ عَهْدَهُمْ إِلَىٰ مُدَّتِهِمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ﴿٤﴾

(४) परन्तु वह मिश्रणवादी जिन से तुमने संविदा कर लिया है तथा उन्होंने तुम्हें तनिक भी हानि नहीं पहुंचाई तथा तुम्हारे विरुद्ध किसी की सहायता नहीं की तो तुम भी संविदा की अवधि उनके साथ पूरी करो। निःसन्देह अल्लाह परहेज़गारों से प्रेम करता है।[1]

فَإِذَا انسَلَخَ الْأَشْهُرُ الْحُرُمُ

(५) फिर प्रतिष्ठित महीनों[2] के व्यतीत होते ही मूर्तिपूजकों को जहाँ पाओ वध करो।[3]

---

[1]मूर्तिपूजकों की यह चौथी श्रेणी है इनसे जितनी अवधि की सन्धि थी उन्हें उतने समय रहने की आज्ञा दी गई। क्योंकि उन्होंने सन्धि के नियमों का पालन किया तथा उसके विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया, इसलिए मुसलमानों के लिए भी उसके पालन को आवश्यक कहा गया।

[2]इन प्रतिष्ठित महीनों से तात्पर्य क्या है ? इसमें मतभेद है। एक विचार तो यह है कि इससे तात्पर्य वही चार महीने हैं जो सम्मानित हैं। अर्थात मुहर्रम, रजब, ज़ीकाद: तथा ज़िलहिज्जा: । तथा विमुक्ति की घोषणा १० ज़िलहिज़्जा को की गयी। इस आधार पर यह हुआ कि जैसे उन्हें केवल पचास दिन का समय दिया गया। क्योंकि सम्मानित महीनों के व्यतीत होने के पश्चात मूर्तिपूजकों को पकड़ कर वध करने की आज्ञा दे दी गयी थी। परन्तु इमाम इब्ने कसीर के अनुसार यहाँ निषेधित महीने नहीं हैं। अपितु १० ज़िलहिज़्जा से १० रबीउस्सानी तक के चार महीने तात्पर्य हैं। उन्हें सम्मानित महीने इसलिए कहा गया है कि विमुक्ति की घोषणा के आधार पर इन चार महीनों में उन मूर्तिपूजकों से लड़ने तथा उनके विरुद्ध किसी भी कार्यवाही की आज्ञा नहीं थी। मुक्ति की घोषणा के आाधार पर यह तर्क अधिक उचित प्रतीत होता है।

[3]कुछ व्याख्याकारों ने इस आदेश को सामान्य माना है अर्थात हरम के क्षेत्र अथवा उसके बाहर के क्षेत्र में जहाँ भी पाओ मारो। तथा कुछ व्याख्याकारों ने सूर: बक़र: की यह आयत वर्णन किया है।

﴿ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِندَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ ۖ فَإِن قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ ﴾

"मस्जिदे हराम के निकट उनसे न लड़ो। यहाँ तक कि वे स्वयं तुम से न लड़ें, यदि वे लड़ें तो तुम्हें भी उनसे लड़ने की आज्ञा है।" (सूर: अल-बक़र:-१९१)

इस आयत से विशेष निर्धारण करके केवल हरम की सीमा से बाहर के क्षेत्र में वध करने की आज्ञा प्रदान की गयी है। (इब्ने कसीर)

فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُّمُوهُمْ وَخُذُوهُمْ وَاحْصُرُوهُمْ وَاقْعُدُوا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ ۚ فَإِن تَابُوا وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ فَخَلُّوا سَبِيلَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ⑤

उन्हें बन्दी बनाओ ।[1] उनका घेराव करो तथा उनके ताक में हर घाटी में जा बैठो ।[2] परन्तु यदि वे क्षमा-याचना कर लें तथा नमाज़ स्थाई रूप से निरन्तर पढ़ने लगें तथा ज़कात अदा करने लगें, तो तुम उनका मार्ग छोड़ दो ।[3] नि:संदेह अल्लाह तआला क्षमा-शील कृपालु है ।

وَإِنْ أَحَدٌ مِّنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ فَأَجِرْهُ حَتَّىٰ يَسْمَعَ كَلَامَ اللَّهِ ثُمَّ أَبْلِغْهُ مَأْمَنَهُ ۚ

(६) यदि मिश्रणवदियों में से कोई तुझसे शरण माँगे तो, तू उसे शरण प्रदान कर दे यहाँ तक कि वह अल्लाह का कथन सुन ले फिर उसे उसके शान्ति स्थान तक पहुँचा दे ।[4] यह इस

---

[1]अर्थात उन्हें बन्दी बना लो अथवा वध कर दो ।

[2]अर्थात इस बात पर बस न करो कि वह जहाँ मिलें कार्यवाही करो बल्कि जहाँ-जहाँ उनके सुरक्षा स्थान दुर्ग अथवा शरणागार हों, वहाँ-वहाँ उनकी ताक में रहो । यहाँ तक कि तुम्हारी आज्ञा के बिना उनके लिए आवागमन सम्भव न रहे ।

[3]अर्थात उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही न की जाये क्योंकि वे मुसलमान हो गये हैं । अर्थात इस्लाम स्वीकार करने के पश्चात नमाज़ निरन्तर पढ़ना तथा ज़कात देना अनिवार्य है, यदि कोई व्यक्ति इनमें से कोई एक कर्त्तव्य छोड़ देता है, तो वह मुसलमान नहीं समझा जायेगा । जिस प्रकार आदरणीय अबू बक्र (رضي الله عنه) ने ज़कात अदा न करने वालों के विरुद्ध इसी आयत से अर्थ प्रमाणित पाया तथा फ़रमाया:

(والله لأقاتلنّ من فرّق بين الصّلوٰة والزّكاة)

"अल्लाह की सौगन्ध मैं उन लोगों से अवश्य लड़ूँगा जो नमाज़ तथा ज़कात के मध्य अन्तर करेंगे अर्थात नमाज़ को पढ़ें परन्तु ज़कात अदा करने से भागें ।"
(बुख़ारी व मुस्लिम बहवाला मिशकात किताबुज़ ज़कात फ़सले सालिस)

[4]इस आयत में उपरोक्त विरोधी मूर्तिपूजकों के सम्बन्ध में एक छूट प्रदान की गयी है कि यदि कोई मूर्तिपूजक शरण माँगे तो उसे शरण प्रदान कर दो अर्थात उसे अपनी सुरक्षा में सुरक्षित रखो ताकि कोई अन्य मुसलमान उसे मार न सके । ताकि उसे

ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْلَمُونَ ۝٦

लिए कि वह लोग अज्ञानी हैं ।[1]

كَيْفَ يَكُونُ لِلْمُشْرِكِينَ عَهْدٌ عِندَ اللَّهِ وَعِندَ رَسُولِهِ إِلَّا الَّذِينَ عَاهَدتُّمْ عِندَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۖ فَمَا اسْتَقَامُوا لَكُمْ فَاسْتَقِيمُوا لَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ۝٧

(७) मूर्तिपूजकों का वचन अल्लाह तथा उस के रसूल के निकट कैसे रह सकता है, सिवाय उनके जिन से संविदा तुम ने मस्जिदे हराम के पास किया है ।[2] तो जब तक वे लोग तुम से सन्धि निभायें, तुम भी उन से वचन का निर्वाह करो । अल्लाह (तआला) परहेज़गार लोगों से प्रेम करता है ।[3]

كَيْفَ وَإِن يَظْهَرُوا عَلَيْكُمْ لَا يَرْقُبُوا فِيكُمْ إِلًّا وَلَا ذِمَّةً ۚ

(८) उनके वचनों का क्या भरोसा, उनको यदि तुम पर प्रभुत्व मिल जाये तो न ये सम्बन्ध का विचार करें न सन्धि वचन का ।[4] अपने

अल्लाह की बातें सुनने तथा इस्लाम धर्म स्वीकार करने का सौभाग्य प्राप्त हो जाये । परन्तु यदि अल्लाह की बातें सुनने के पश्चात भी वह इस्लाम धर्म नहीं स्वीकार करता है, तो उसे उसके सुरक्षित स्थान तक पहुँचा दो । अर्थात अपनी सुरक्षा का कर्त्तव्य अन्तिम क्षण तक निभाना है । जब तक वह अपनी सुरक्षित स्थान तक नहीं पहुँच जाता उसकी सुरक्षा का दायित्व तुम्हारे ऊपर है ।

[1]अर्थात शरणार्थियों को शरण की छूट इसलिए प्रदान की गयी है क्योंकि यह लोग अज्ञानी हैं सम्भव है अल्लाह तथा उसके रसूल की बातें उनके ज्ञान में आयें तथा मुसलमानों का आचरण तथा व्यवहार वह देखें, तो इस्लाम धर्म स्वीकार करके परलोक की यातना से वच जायें । जिस प्रकार हुदैबिया की सन्धि के पश्चात बहुत से काफ़िर मदीना आते-जाते रहे, तो मुसलमानों के व्यवहार तथा आचरण को देख कर इस्लाम धर्म को समझने में बहुत सहायता मिली तथा बहुत से लोग मुसलमान हो गये ।

[2]यह नकारात्मक प्रश्न है, अर्थात जिन मूर्तिपूजकों से तुम्हारी सन्धि है, उनके अतिरिक्त अब किसी से सन्धि शेष नही रही है ।

[3]अर्थात वचन निभाना, अल्लाह के समक्ष प्रिय बात है । इसलिए सम्बन्ध में सावधानी आवश्यक है ।

[4] كَيْفَ (कैफ़) का अर्थ है 'कैसे' यह प्रश्न भी अस्वीकृति को बल देने के लिए प्रयोग हुआ है إِلٌّ (इल्ल) का अर्थ नाता (सम्बन्ध) तथा ذِمَّة (ज़िम्म:) का अर्थ वचन हैं अर्थात उन मूर्तिपूजकों की बातों का क्या भरोसा ? जबकि उनकी दशा यह है कि यदि ये तुम

يُرْضُوْنَكُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ وَ تَاْبٰى قُلُوْبُهُمْ ۚ وَاَكْثَرُهُمْ فٰسِقُوْنَ ۝٨

मुख से ये तुम्हें परिचा रहे हैं परन्तु इनके हृदय नहीं मानते और उनमें से अधिकतर तो (दुराचारी) फ़ासिक़ हैं ।

اِشْتَرَوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيْلًا فَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِهٖ ؕ اِنَّهُمْ سَآءَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝٩

(९) उन्होंने अल्लाह की आयतों को अति कम मूल्य में बेच दिया तथा उसके मार्ग से रोका। अत्यधिक बुरा है जो यह कर रहे हैं।

لَا يَرْقُبُوْنَ فِيْ مُؤْمِنٍ اِلًّا وَّلَا ذِمَّةً ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُعْتَدُوْنَ ۝١٠

(१०) यह तो किसी मुसलमान के पक्ष में किसी सम्बन्ध का अथवा सन्धि का कदापि चिन्ता नहीं करते, यह हैं ही अतिक्रमणकारी ।[1]

فَاِنْ تَابُوْا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَاِخْوَانُكُمْ فِي الدِّيْنِ ؕ وَنُفَصِّلُ الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ

(११) अब भी यदि ये क्षमा-याचना (पश्चाताप) कर लें तथा नमाज़ निरन्तर पढ़नें लगें तथा ज़कात देते रहें, तो तुम्हारे धर्म भाई हैं ।[2]

पर विजयी हों तो किसी सम्बन्ध अथवा वचन की कोई चिन्ता नहीं करेंगे। कुछ व्याख्याकारों का मत है कि प्रथम कैफ़ का अर्थ मूर्तिपूजक तथा द्वितीय का अर्थ यहूदी हैं क्योंकि उनकी विशेषता वर्णन की गयी है कि वे अल्लाह की आयतों को तुच्छ मूल्य पर विक्रय कर देते हैं। तथा यह दुर्गुण यहूदियों का ही रहा है।

[1]बार-बार स्पष्टीकरण का उद्देश्य मूर्तिपूजकों तथा यहूदियों की इस्लाम धर्म से शत्रुता तथा उनके दिलों में बसे द्वेष भावों को प्रदर्शित करना है।

[2]नमाज़, तौहीद (एकेश्वरवाद में विश्वास) तथा रिसालत के स्वीकार करने के पश्चात, इस्लाम का सबसे श्रेष्ठ तथा विशेष मूल स्तम्भ है, जो अल्लाह का अधिकार है, उसमें अल्लाह की उपासना के विभिन्न रूप हैं। इसमें हाथ बाँधकर खड़ा होना है, दण्डवत तथा माथा टेकना है, प्रार्थना तथा अर्चना है, अल्लाह की श्रेष्ठता तथा प्रताप का तथा अपनी निर्बलता तथा विवशता का प्रदर्शन है। उपासना की यह सारी विधियाँ तथा रूप मात्र अल्लाह के लिए योग्य हैं। नमाज़ के पश्चात द्वितीय कर्त्तव्य ज़कात अदा करना है जिसमें वंदनीय पथ होने के साथ-साथ दूसरे मनुष्यों के प्रति उनके मौलिक अधिकार भी सम्मिलित हैं। ज़कात से समाज तथा उसकी जाति के निर्धन अनाथ, अपंग, असहाय, लोग लाभ उठाते हैं इसीलिए रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कथनों में भी तौहीद की गवाही देने के पश्चात उन्हीं दो बातों को अधिक स्पष्ट रूप एवं विशेषता से वर्णित किया गया है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "मुझे आदेश दिया गया है कि मै लोगों से युद्ध करूँ, यहाँ तक कि वे इस बात की

يَعْلَمُونَ ⑪

हम तो जानकारों के लिए अपनी आयतों को सविस्तार वर्णन कर रहे हैं।

وَإِنْ نَّكَثُوٓا أَيْمَانَهُم مِّنۢ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوا فِي دِينِكُمْ فَقَاتِلُوٓا أَئِمَّةَ الْكُفْرِ ۙ إِنَّهُمْ لَآ أَيْمَانَ لَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَنتَهُونَ ⑫

(१२) यदि ये लोग प्रतिज्ञा तथा वचन के पश्चात भी अपनी प्रतिज्ञा भंग कर दें तथा तुम्हारे धर्म की निन्दा भी करें, तो तुम भी उन अधर्मियों के प्रमुखों से भिड़ जाओ। उनकी सौगन्ध कोई वस्तु नहीं, संभव है कि इस प्रकार वह रुक जायें।[1]

أَلَا تُقَاتِلُونَ قَوْمًا نَّكَثُوٓا أَيْمَانَهُمْ وَهَمُّوا بِإِخْرَاجِ الرَّسُولِ وَهُم بَدَءُوكُمْ أَوَّلَ

(१३) तुम उन लोगों के सिर कुचलने के लिए क्यों तैयार नहीं होते।[2] जिन्होंने अपनी प्रतिज्ञाओं को तोड़ दिया तथा (अन्तिम)

गवाही दें कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं, तथा मोहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अल्लाह के संदेशवाहक हैं। तथा नमाज़ स्थापित करें तथा ज़कात दें।" (सहीह बुख़ारी किताबुल ईमान बाब फ़इन ताबू व अकामुस्सलात, मुस्लिम किताबुल ईमान बाबुल अमरे बिकितालिन्नास......) आदरणीय अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद का कथन है (وَمَنْ لَّمْ يُزَكِّ فَلَا صَلَاةَ لَهُ) 'जिसने ज़कात नहीं दी, उसकी नमाज़ भी नहीं होती।'

[1]أيمان (ऐमान) (यमीन) का बहुवचन है, जिसका अर्थ 'सौगन्ध है'। أئمة (अइम्मा) إمام (इमाम) का बहुवचन है। अर्थ मुखिया, नेता है। अर्थ यह है कि यदि ये लोग वचन तोड़ दें, तथा धर्म को कलंकित करने का प्रयत्न करें, तो प्रत्यक्ष रूप से यह सौगन्ध भी खायें तो उनका कोई भरोसा नहीं। काफ़िरों के इन नेताओं से युद्ध करो। सम्भव है कि वे इस प्रकार अपने कुफ़्र से रुक जायें। इससे कुछ लोगों ने यह अर्थ निकाला है कि यदि इस्लामी राज्य में निवास करने वाले मुसलमानों के अतिरिक्त अन्य धर्मों का अनुयायी यदि वचन अथवा सन्धि को नहीं तोड़ता परन्तु केवल इस्लाम धर्म को कलंकित करता है तो उसका वध नहीं किया जायेगा। क्योंकि कुरआन ने उनसे युद्ध करने के लिए दो चीज़ें वर्णित की हैं, इसलिए जब तक दोनों चीज़ों को वे नहीं करेंगे वे वध कर डलाने के अधिकारी नहीं होंगे परन्तु इमाम मालिक, इमाम शाफ़ई तथा अन्य इमामों का मत है कि धर्म को कलंकित करने का प्रयत्न ही वचन तोड़ने के समान है इसलिए उनके निकट वे दोनों चीज़ें आ जाती हैं, अतः इस शरणार्थी का वध उचित है। (फ़तहुल क़दीर)

[2]ألا का प्रयोग उत्तेजित करने के लिए किया जाता है, अल्लाह तआला मुसलमानों को धर्मयुद्ध के लिये प्रलोभन दे रहा है।

مَرَّةٍ ۚ اَتَخْشَوْنَهُمْ ۚ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿١٣﴾

ईशदूत (नराशंस) को देश से निकाल देने की सोच में हैं ।[1] तथा स्वय ही प्रथम बार उन्होंने तुम से छेड़ की है ।[2] क्या तुम उनसे डरते हो ? अल्लाह ही को सबसे अधिक अधिकार है कि तुम उससे डर रखो यदि तुम ईमान वाले हो ।

قَاتِلُوْهُمْ يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ بِاَيْدِيْكُمْ وَيُخْزِهِمْ وَيَنْصُرْكُمْ عَلَيْهِمْ وَيَشْفِ صُدُوْرَ قَوْمٍ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿١٤﴾

(१४) उनसे तुम युद्ध करो, अल्लाह तआला तुम्हारे हाथों उनको यातना देगा, उन्हें अपमानित तथा निरादर करेगा, तुम्हें उन पर सहायता देगा तथा मुसलमानों के दिलों को ठन्डा करेगा ।

وَيُذْهِبْ غَيْظَ قُلُوْبِهِمْ ۗ وَيَتُوْبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ ۗ

(१५) तथा उनके दिलों के दुख तथा क्रोध को दूर करेगा,[3] तथा वह जिसकी ओर चाहता है

---

[1]इससे तात्पर्य दारुननदवा है जिसमें मक्का के प्रमुखों ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को देश निकाला देने, बन्दी बनाने अथवा हत्या करने के प्रस्ताव पर विचार किया ।

[2]इससे तात्पर्य बद्र के युद्ध में मक्का के मूर्तिपूजकों का व्यवहार है कि वे अपने व्यापारिक क़ाफ़िले की सुरक्षा के लिए गये । परन्तु इसके उपरान्त कि उन्होंने देख लिया कि क़ाफ़िला बच कर निकल गया है, वह बद्र के स्थान पर मुसलमानों से लड़ने की तैयारी तथा छेड़खानी करते रहे, जिसके परिणामस्वरूप अन्त में युद्ध होकर ही रहा । अथवा इससे तात्पर्य कबीला बनी बक्र की वह सहायता है जो क़ुरैश ने उनकी की, जब कि उन्होंने रसूल अल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ सन्धि किये हुए क़बीला पर चढ़ाई की थी, जब कि क़ुरैश की यह सहायता सन्धि के विरुद्ध थी ।

[3]अर्थात जब यह मुसलमान कमज़ोर थे, तो यह मूर्तिपूजक उन पर अत्याचार करते थे, जिसके कारण मुसलमानों के हृदय उन से अत्यधिक दुखी तथा घायल थे । जब मुसलमानों के हाथों वह मारे जायेंगे तथा अनादर तथा अपमान उनके भाग्य में आयेगी, तो प्राकृतिक बात है कि इससे उत्पीड़ित एवं दुखी मुसलमानों के दिलों को ठंढक मिलेगी तथा मानसिक क्रोध का निवारण होगा ।

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿١٥﴾

दया से आकर्षित होता है, तथा अल्लाह तआला ज्ञाता एवं विवेकी है।

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تُتْرَكُوْا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَلَمْ يَتَّخِذُوْا مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلَا رَسُوْلِهٖ وَلَا الْمُؤْمِنِيْنَ وَلِيْجَةً ۭ وَاللّٰهُ خَبِيْرٌۢ بِمَا تَعْمَلُوْنَ ﴿١٦﴾

(१६) क्या तुम यह समझ बैठे हो कि तुम छोड़ दिये जाओगे ?[1] यद्यपि कि अल्लाह (तआला) ने तुम में से उन्हें श्रेष्ठ नहीं किया है जो धर्मयुद्ध के सैनिक हैं।[2] तथा जिन्होंने अल्लाह के तथा उसके रसूल के एवं ईमानवालों के अतिरिक्त किसी को मित्र नहीं बनाया।[3] और अल्लाह (तआला) भली-भाँति जानने वाला है जो तुम कर रहे हो।[4]

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِيْنَ اَنْ يَّعْمُرُوْا مَسٰجِدَ اللّٰهِ شٰهِدِيْنَ عَلٰٓي اَنْفُسِهِمْ بِالْكُفْرِ ۭ اُولٰۗىِٕكَ حَبِطَتْ

(१७) असम्भव है कि मूर्तिपूजक अल्लाह की मस्जिद को आबाद करें, जबकि हाल यह है कि यह अपने अविश्वास के स्वयं साक्षी हैं।[5]

---

[1]अर्थात बिना किसी परीक्षा के।

[2]जैसे कि धर्मयुद्ध के द्वारा परीक्षा ली गयी।

[3]وَلِيجَة (वलीज:) घनिष्ठ तथा हार्दिक मित्र को कहते हैं। मुसलमानों को चूँकि अल्लाह तथा उसके रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के शत्रुओं से प्रेम करने तथा मित्रता पूर्ण सम्बन्ध रखने से भी रोका गया था, अत: यह भी परीक्षा का एक साधन था, जिससे नि:स्वार्थी ईमानवालों को अन्यों से अलग किया गया।

[4]अर्थ यह है कि अल्लाह को तो पहले ही हर वस्तु का ज्ञान है, परन्तु धर्मयुद्ध में बुद्धिमत्ता यह है कि इससे स्वार्थी तथा नि:स्वार्थी आज्ञाकारी तथा अवज्ञाकारी भक्त स्पष्ट हो जाते हैं, जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति देख तथा पहचान लेता है।

[5]مساجد الله से तात्पर्य मस्जिदे हराम है। बहुवचन शब्द इसलिए प्रयोग किया गया है कि दुनिया की सभी मस्जिदों का यह केन्द्र (क़िबला) है। अथवा अरबों में एक वचन के लिए बहुवचन का प्रयोग भी उचित कहा जाता है। अर्थ यह है कि अल्लाह के घर (अर्थात मस्जिदे हराम) का निर्माण करना अथवा बसाना मुसलमानों का काम है, न कि उनका जो कुफ़्र तथा शिर्क करते हैं। तथा उसको स्वीकार भी करते हैं। जैसे कि वे तलबिया में (धर्मघोष) कहा करते थे «لَبَّيْكَ! لَا شَرِيْكَ لَكَ، إِلَّا شَرِيْكًا هُوَ لَكَ، تَمْلِكُهُ وَمَا مَلَكَ»

أَعْمَالُهُمْ ۚ وَفِي النَّارِ هُمْ خَالِدُونَ ⑰

उनके कर्म नष्ट तथा बेकार हैं, तथा वे स्थाई रूप से नरकवासी हैं ।[1]

إِنَّمَا يَعْمُرُ مَسَاجِدَ اللَّهِ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ وَلَمْ يَخْشَ إِلَّا اللَّهَ ۖ فَعَسَىٰ أُولَٰئِكَ أَنْ يَكُونُوا مِنَ الْمُهْتَدِينَ ⑱

(१८) अल्लाह की मस्जिदों को तो वह आबाद करते हैं, जो अल्लाह पर तथा प्रलय के दिन पर ईमान रखते हों । नमाज़ निरन्तर पढ़ते हों, जकात देते हों, और अल्लाह के अतिरिक्त किसी से न डरते हों, सम्भव है कि यही लोग नि:संदेह मार्गदर्शन प्राप्त हैं ।[2]

أَجَعَلْتُمْ سِقَايَةَ الْحَاجِّ وَعِمَارَةَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ كَمَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَجَاهَدَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۚ لَا يَسْتَوُونَ

(१९) क्या तुम ने हाजियों को पानी पिला देना तथा मस्जिदे हराम की सेवा करना उस के समान कर दिया है जो अल्लाह पर तथा प्रलय के दिन पर ईमान लाये तथा अल्लाह के मार्ग में धर्म युद्ध किया, यह अल्लाह के

(सहीह मुस्लिम बाबुत तलबीय:) अथवा इससे तात्पर्य वह स्वीकार्य है जो प्रत्येक धर्मावलम्बी करता है कि मैं यहूदी, ईसाई, साबई अथवा मूर्तिपूजक हूँ । (फ़तहुल क़दीर)

[1]अर्थात उनके वे कर्म जो देखने में पुण्य लगते हैं, जैसे खाना-ए-काअबा की परिक्रमा, उमरा तथा हाजियों की सेवा आदि । परन्तु ईमान के बिना वह ऐसे वृक्ष के समान हैं जो बिना छाया तथा बिना फल के हो अथवा वे उन फूलों के समान हैं जिनमें सुगन्ध नहीं है ।

[2]जिस प्रकार हदीस में भी है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

« إِذَا رَأَيْتُمُ الرَّجُلَ يَعْتَادُ الْمَسْجِدَ، فَاشْهَدُوا لَهُ بِالإِيمَانِ » .

"जब तुम देखो कि कोई मस्जिद में नियमित रूप से आता है, तो तुम उसके ईमान की गवाही दो ।" (त्रिमिज़ी तफ़सीर सूर: तौब:)

क़ुरआन करीम में यहाँ पर भी अल्लाह पर ईमान तथा आख़िरत पर ईमान के पश्चात जिन कर्मों का वर्णन किया गया है वह नमाज़ जकात तथा अल्लाह से डरना है जिससे नमाज़, जकात तथा तक़्वा (अल्लाह के डर) का महत्व प्रकाशित है ।

عِندَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿١٩﴾

निकट समान नहीं[1] तथा अल्लाह (तआला) अन्यायियों को मार्ग नहीं दिखाता है |[2]

---

[1]मूर्तिपूजक हाजियों को पानी पिलाने तथा मस्जिदे हराम के देख भाल करने का जो कार्य करते थे उस पर उन्हें बड़ा गर्व था तथा इसके सापेक्ष वे ईमान तथा धर्मयुद्ध को कोई विशेषता नहीं देते थे | जिसकी विशेषता मुसलमानों में थी | अल्लाह ने फ़रमाया क्या तुम हाजियों को पानी पिलाने तथा मस्जिदे हराम का प्रवन्ध करने को अल्लाह पर ईमान तथा अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध के समान समझते हो ? याद रखो, अल्लाह के निकट ये समान नहीं हैं | अपितु मूर्तिपूजक का कोई भी कर्म स्वीकार नहीं चाहे वह पुण्य के रूप में ही हो जैसाकि इससे पूर्व की आयत के वाक्य حَبِطَت أعمالهم में स्पष्ट किया जा चुका है | कुछ कथनों में इसके उतरने का कारण मुसलमानों की आपस की बातचीत है कि एक रोज कुछ मुसलमान मिम्बरे नववी के निकट एकत्रित थे, उन में से एक ने कहा कि इस्लाम लाने के पश्चात मेरे निकट सबसे श्रेष्ठ कर्म हाजियों को पानी पिलाना है, दूसरे ने कहा मस्जिदे हराम आवाद करना, तीसरे ने कहा बल्कि अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध करना इस सभी से श्रेष्ठ है, जो तुम ने वर्णन किये हैं | आदरणीय उमर (رضي الله عنه) ने जब उनमें आपस में यह बात करते हुए सुना तो डाँटा तथा फ़रमाया कि मिम्बरे रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निकट आवाजें ऊँची करके मत बात करो | यह शुक्रवार का दिन था | हदीस को कहने वाले आदरणीय नौमान बिन बशीर (رضي الله عنه) कहते हैं कि मैं शुक्रवार की नमाज के पश्चात नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सेवा में उपस्थित हुआ तथा अपनी आपस की इस वातचीत के विषय में पूछा | जिस पर यह आयत उतरी | (सहीह मुस्लिम किताबुल इमार: बाब फ़ज़लिल जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह) जिसमें जैसाकि यह स्पष्ट कर दिया गया है कि अल्लाह पर ईमान, आख़िरत पर ईमान, तथा अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध सर्वश्रेष्ठ तथा विशेषता वाले कर्म हैं | वार्तालाप के माध्यम से वास्तविक विशेषता तथा श्रेष्ठता तो धर्मयुद्ध का वर्णन करना था, परन्तु अल्लाह पर ईमान के बिना किसी प्रकार के कर्म स्वीकार नहीं किये जाते, इसलिए सर्वप्रथम अल्लाह पर ईमान का वर्णन किया गया | अत: इससे यह ज्ञात हुआ कि इसके उतरने का कारण केवल मूर्तिपूजकों के कुकर्मों के कारण ही नहीं, अपितु इसके अतिरिक्त स्वयं मुसलमानों का अपनी-अपनी ओर से किसी कर्म को किसी कर्म पर अधिक श्रेष्ठता देने का कारण था, जबकि यह काम शरीअत वाले अर्थात ईशदूत का है न कि मुसलमानों का | मुसलमानों का कार्य तो प्रत्येक उस बात के अनुसार कर्म करना है जो अल्लाह तथा उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ओर से उन्हें बतायीं जायें |

[2]अर्थात ये लोग चाहे जैसे भी दावा करें वास्तव में अत्याचारी हैं अर्थात मूर्तिपूजक हैं, इसलिए कि शिर्क सब से बड़ा अत्याचार है | इस अत्याचार के कारण ही वे अल्लाह के

اَلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَهَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۙ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ ؕ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَآئِزُوْنَ ﴿٢٠﴾

(२०) जो लोग ईमान लाये, हिजरत की, अल्लाह के मार्ग में अपने माल तथा अपने प्राण से धर्मयुद्ध किया वह अल्लाह के समक्ष अत्यधिक सम्मानित हैं, तथा यही लोग सफलता प्राप्त करने वाले हैं।

يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِّنْهُ وَرِضْوَانٍ وَّجَنّٰتٍ لَّهُمْ فِيْهَا نَعِيْمٌ مُّقِيْمٌ ﴿٢١﴾

(२१) उनका पोषक उन्हें अपनी कृपा एवं अनुग्रह तथा ऐसी स्वर्गों की शुभ सूचना देता है जिनमें उनके लिये स्थाई सुख है।

خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ عَظِيْمٌ ﴿٢٢﴾

(२२) वहाँ ये नित्य रहेंगे, अल्लाह के पास निःसन्देह बहुत बड़े बदले हैं।[1]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوْٓا اٰبَآءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَآءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاِيْمَانِ ؕ وَمَنْ يَّتَوَلَّهُمْ مِّنْكُمْ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿٢٣﴾

(२३) हे ईमानवालों! अपने पिताओं और अपने भाईयों को मित्र न बनाओ, यदि वह कुफ़्र को इस्लाम से अधिक प्रिय समझें। तुममें से जो भी उनसे प्रेम रखेगा वह पूर्ण पापी अत्याचारी है।[2]

मार्गदर्शन से वंचित हैं इसलिए उनकी तथा मुसलमानों की जिनको अल्लाह का मार्गदर्शन प्राप्त है, आपस में कोई तुलना ही नहीं।

[1]इन आयतों में उन ईमानवालों की प्रधानता की चर्चा की गयी है जिन्होंने प्रवास किया तथा अपने तन-मन-धन से धर्मयुद्ध में भाग लिया। फ़रमाया कि अल्लाह के यहाँ उन्हीं का पद श्रेष्ठ है तथा यही सफल हैं, यह अल्लाह की कृपा तथा प्रसन्नता एवं स्थाई पुरस्कार के पात्र हैं, न कि वे जो स्वयं अपने मुहँ मियाँ मिट्ठू बनते हैं तथा अपने पूर्वजों के रीति रिवाजों को ही अल्लाह पर ईमान की तुलना में प्रिय रखते हैं।

[2]यह वही विषय है जिसकी पवित्र क़ुरआन में विभिन्न स्थानों में चर्चा की गई है। (देखिये सूर: आले इमरान आयत-२८ से ११८ तक, सूर: मायद: आयत ५१ तथा सूर: मुजादिल:-२२) यहाँ धर्मयुद्ध तथा देश त्याग के विषय में भी चूँकि इसकी विशेषता स्पष्ट है, इसलिए इसका वर्णन यहाँ भी किया गया है। अर्थात धर्मयुद्ध तथा हिजरत में तुम्हारे पिताओं तथा भाईयों का प्रेम आड़े न आये, क्योंकि यदि वे अब भी काफ़िर हैं,

قُلْ إِن كَانَ آبَاؤُكُمْ وَأَبْنَاؤُكُمْ وَإِخْوَانُكُمْ وَأَزْوَاجُكُمْ وَعَشِيرَتُكُمْ وَأَمْوَالٌ اقْتَرَفْتُمُوهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسَاكِنُ تَرْضَوْنَهَا أَحَبَّ إِلَيْكُم مِّنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ وَجِهَادٍ فِي سَبِيلِهِ فَتَرَبَّصُوا حَتَّىٰ يَأْتِيَ اللَّهُ بِأَمْرِهِ ۗ وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ﴿٢٤﴾

(२४) (आप) कह दीजिए कि यदि तुम्हारे पिता, तथा तुम्हारे पुत्र एवं तुम्हारे भाई तथा तुम्हारी पत्नियाँ तथा तुम्हारे वंश तथा अर्जित धन तथा वह व्यापार जिसकी कमी से तुम डरते हो तथा वे आवास जिन्हें तुम प्रिय रखते हो (यदि) यह तुम्हें अल्लाह एवं उसके रसूल तथा अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध से प्रियवर हैं, तो तुम प्रतिक्षा करो कि अल्लाह तआला अपनी यातना को ले आए। अल्लाह तआला भ्रष्टाचारियों को मार्ग नहीं दिखाता है।[1]

तो तेरे मित्र हो ही नहीं सकते, अपितु वे तो तुम्हारे शत्रु हैं। यदि तुम उनसे प्रेम पूर्ण सम्बन्ध रखोगे, तो याद रखो तुम भी अत्याचारी कहलाओगे।

[1]इस आयत में भी विगत विषय का बड़े प्रबल रूप से वर्णन किया गया है। عشيرة बहुवचन संज्ञा है वह निकटतम सम्बन्धी जिनके साथ मनुष्य दैनिक जीवन व्यतीत करता है अर्थात परिवार, वंश। اقتراف (इक़्तेराफ़) कमाई के अर्थ के लिये आता है। تجارة (तिजारत), व्यापार के क्रय-विक्रय को कहते हैं जिसका उद्देश्य लाभ की प्राप्ति होती हो। كساد (कसाद) मन्दी को कहते हैं अर्थात बिक्री की वस्तु उपस्थित हो परन्तु ग्राहक न हों अथवा उस वस्तु का समय निकल गया हो। जिसके कारण लोगों को उसकी आवश्यकता न हो। दोनों परिस्थितियाँ मन्दी की हैं। مساكن (मसाकिन) मस्कन का बहुवचन है। इससे तात्पर्य वे घर हैं जिनमें निवास कर मनुष्य ऋतुओं की तीव्रता तथा घटना से बचने, सम्मान पूर्वक रहने-सहने तथा अपने परिवार की सुरक्षा के लिए निर्माण करता हैं, ये सभी वस्तुऐं अपने-अपने स्थान पर आवश्यक हैं, तथा इनकी उपयोगिता तथा विशेषता भी अति आवश्यक तथा मनुष्य को इन सभी वस्तुओं से हार्दिक प्रेम एक प्राकृतिक बात है। (जो निन्दनीय नहीं) परन्तु यदि यह प्रेम अल्लाह तथा उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के प्रेम से अधिक तथा अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध करने में रुकावट बन जाये, तो यह बात अल्लाह को अति अप्रिय है। तथा उसकी अप्रसन्नता का कारण बनती है तथा यह वह अवज्ञा अथवा अवहेलना है जिसके कारण मनुष्य अल्लाह के मार्गदर्शन से वंचित हो सकता है। जिस प्रकार कि अन्तिम शब्दों में चेतावनी से स्पष्ट होता है। हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी इस विषय को बड़े स्पष्ट शब्दों में वर्णन किया है। जैसे एक अवसर पर आदरणीय

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فِيْ مَوَاطِنَ كَثِيْرَةٍ ۙ وَّيَوْمَ حُنَيْنٍ ۙ اِذْ اَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَّضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُمْ مُّدْبِرِيْنَ ﴿۲۵﴾

(२५) नि:संदेह अल्लाह तआला ने तुम्हें बहुत से रण क्षेत्रों में विजय प्रदान की है। तथा हुनैन के युद्ध के दिन भी, जबकि तुम्हें अपनी अधिक संख्या पर गर्व था, परन्तु इसने तुम्हें कोई लाभ नहीं दिया, अपितु धरती अपने विस्तार के उपरान्त भी तुम्हारे लिए संकीर्ण हो गयी, फिर तुम पीठ फेर कर मुड़ गये।

ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِيْنَتَهٗ عَلٰى رَسُوْلِهٖ وَعَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ وَاَنْزَلَ جُنُوْدًا لَّمْ تَرَوْهَا ۚ وَعَذَّبَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۭ وَذٰلِكَ جَزَاۗءُ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۲۶﴾

(२६) फिर अल्लाह ने अपनी ओर से शान्ति अपने नबी पर तथा ईमानवालों पर उतारी तथा अपनी वह सेना भेजी, जिन्हें तुम देख नहीं रहे थे तथा काफ़िरों को पूरा दण्ड दिया। और इन काफ़िरों का यही बदला था।

उमर (رضي الله عنه) ने कहा, "हे रसूलु-ल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ! मुझे आप अपने अतिरिक्त, प्रत्येक वस्तु से अधिक प्रिय हैं।" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "जब तक मैं उसकी अपनी जान से अधिक प्रिय न हो जाऊँ, उस समय तक वह ईमानवाला नहीं।" आदरणीय उमर (رضي الله عنه) ने कहा, "परन्तु अब अल्लाह की सौगन्ध आप मुझे अपनी जान से भी अधिक प्रिय हैं।" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "हे उमर ! अब तुम मोमिन हो।" (सहीह बुख़ारी किताबुल ऐमान वन्नुज़ुर बाब कैफ़ कान यमिनुन्नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) एक अन्य कथन में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "सौगन्ध है उस शक्ति की जिसके हाथों में मेरा प्राण है, तुम में से कोई व्यक्ति उस समय तक मुसलमान नहीं, जब तक मैं उस को उसके पिता से, उसकी सन्तान से तथा सभी लोगों से अधिक प्रिय न हो जाऊँ।" (सहीह बुख़ारी किताबुल ईमान बाब हुब्बिर्रसूले सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मिनल ईमान, तथा मुस्लिम किताबुल ईमान) तथा एक अन्य हदीस (ईशदूत के कथन) में धर्म युद्ध के महत्व की चर्चा करते हुये आप ने कहा कि जब तुम निश्चित समय के लिये वस्तु उधार देकर उसे कम मूल्य पर क्रय करना अपना व्यवहार बना लोगे तथा बैलों की पूँछ पकड़ कर खेती करने पर प्रसन्न एवं सन्तुष्ट हो जाओगे तथा धर्मयुद्ध छोड़ बैठोगे तो अल्लाह तुम पर ऐसा अपमान आच्छादित कर देगा जिससे तुम उस समय तक न निकल सकोगे जब तक अपने धर्म की ओर न लौटोगे। (अबू दाऊद, किताबुल बुयूअ बाबुन्नहय अनिल इन: मुसनद अहमद, भाग २, पृ॰ ४२)

ثُمَّ يَتُوبُ اللّٰهُ مِنۢ بَعۡدِ ذٰلِكَ عَلٰى مَنۡ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ﴿۲۷﴾

(२७) फिर उसके पश्चात भी जिसे चाहे अल्लाह (तआला) क्षमा करे ।[1] अल्लाह ही क्षमावान तथा कृपालु है ।

---

[1]हुनैन मक्का तथा तायफ़ नगरों के बीच एक घाटी का नाम है यहाँ हवाज़िन तथा सक़ीफ़ के दो क़बीले रहते थे, जो अपनी धनुष विद्या में प्रसिद्ध थे । यह मुसलमानों के विरुद्ध लड़ने की तैयारी कर रहे थे कि इसकी सूचना रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मिली तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम बारह हज़ार मुसलमानों की सेना लेकर इन क़बीलों से युद्ध करने के लिए हुनैन की घाटी में गये, यह मक्का विजय के १८ अथवा १९ दिन के पश्चात शव्वाल की घटना है । उपरोक्त वर्णित क़बीले ने पूर्ण तैयारी कर रखी थी तथा विभिन्न सुरक्षित स्थानों पर तीर चलाने वालों को निर्धारित कर दिया था । इधर मुसलमानों में भी यह भावना उत्पन्न हो चुकी थी कि आज कम से कम संख्या की कमी के कारण हम पराजित नहीं होंगे । अर्थात अल्लाह तआला की सहायता के बजाये अपनी अधिक संख्या पर भरोसा अधिक हो गया । अल्लाह तआला को यह गर्व तथा विचार प्रिय नहीं लगा । परिणाम स्वरूप जब हवाज़िन के धनुर्धारियों ने विभिन्न स्थानों से मुसलमानों की सेना पर अचानक तीर चलाना प्रारम्भ कर दिया । तो यह असंभावित तथा तीरों की बौछार से मुसलमानों के पैर उखड़ गये तथा वे भाग खड़े हुए । मैदान में केवल रसूलुल्लाह सल्लल्लहु अलैहि वसल्लम तथा सौ के लगभग मुसलमान रह गये । आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मुसलमानों को पुकार रहे थे, "अल्लाह के भक्तो ! मेरे पास आओ, मैं अल्लाह का रसूल हूँ ।" कभी यह वाक्य पढ़ते أنا النبي لا كذب أنا ابن عبدالمطلب फिर आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने आदरणीय अब्बास (رضي الله عنه) (जिनकी आवाज़ अति तीव्र थी) को आदेश दिया कि मुसलमानों को एकत्रित करने के लिए आवाज़ दें । अत: उनकी आवाज़ सुन कर मुसलमान अति लज्जित हुए तथा पुन: मैदान में आ गये तथा पुन: इस प्रकार दृढ़ता से लड़े कि अल्लाह ने विजय प्रदान की, अल्लाह तआला की भी सहायता इस प्रकार प्राप्त हुई कि एक तो उनके हृदय को शान्ति प्रदान की, जिससे उनके दिलों से शत्रु का भय दूर हो गया । दूसरे फ़रिश्ते भी उतरे इस युद्ध में मुसलमानों ने छ: हज़ार काफ़िरों को बन्दी बनाया जिन्हें बाद में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के कहने पर छोड़ दिया गया तथा बहुत अधिक सामग्री युद्ध में प्राप्त हुई । युद्ध के पश्चात उनके बहुत से सरदार भी मुसलमान हो गये । यहाँ तीन आयतों में अल्लाह तआला ने इस घटना को संक्षिप्त रूप से वर्णन किया है ।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓا۟ إِنَّمَا ٱلْمُشْرِكُونَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا۟ ٱلْمَسْجِدَ ٱلْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هَٰذَا ۚ وَإِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيكُمُ ٱللَّهُ مِن فَضْلِهِۦٓ إِن شَآءَ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٢٨﴾

(२८) हे ईमानवालो ! अवश्य मूर्तिपूजक अपवित्र हैं।[1] वह इस वर्ष के पश्चात मस्जिदे हराम के निकट भी न आने पायें।[2] यदि तुम्हें निर्धनता का भय है, तो अल्लाह तुम्हें अपनी कृपा से धनवान बना देगा यदि चाहे।[3] निःसन्देह अल्लाह ज्ञानी तथा विवेकशील है।

قَٰتِلُوا۟ ٱلَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِٱللَّهِ وَلَا بِٱلْيَوْمِ ٱلْءَاخِرِ وَلَا يُحَرِّمُونَ

(२९) उन लोगों से लड़ो जो अल्लाह पर तथा प्रलय पर विश्वास नहीं रखते, जो अल्लाह

---

[1]मूर्तिपूजकों के अपवित्र तथा अशुद्ध होने का तात्पर्य आस्था, विश्वास तथा कर्मों की अपवित्रता है। कुछ के निकट मूर्तिपूजक बाह्य तथा आन्तरिक दोनो रूप में अपवित्र हैं क्योंकि वे शौच (सफ़ाई, स्वच्छता तथा पवित्रता) का इस प्रकार प्रबन्ध नहीं करते, जिसका आदेश धार्मिक नियमों ने दिया है।

[2]यह वही आदेश है जो ९ हिजरी में मुक्ति की घोषणा के समय किया गया था। जिसका विवरण पूर्व में गुज़र चुका है। यह निषेध कुछ के निकट केवल मस्जिदे हराम के लिए है। वरन् आवश्यकतानुसार मूर्तिपूजक अन्य मस्जिदों में प्रवेश कर सकते हैं। जिस प्रकार नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने सुमामा बिन उसाल को मस्जिदे नबवी के एक स्तम्भ से बाँध कर रखा था। यहाँ तक कि अल्लाह ने उनके दिल में इस्लाम तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का प्रेम डाल दिया तथा वह मुसलमान हो गये। इसके अतिरिक्त अधिकतर आलिमों के निकट यहाँ मस्जिदे हराम से तात्पर्य सम्पूर्ण हरम है। अर्थात हरम की सीमा में मूर्तिपूजकों का प्रवेश वर्जित है। कुछ तत्वों के आधार पर आदेश से उन ग़ैर मुस्लिमों तथा सेवक को जो मुस्लिम राज्य में निवास करते है पृथक किया गया है। इसी प्रकार आदरणीय उमर बिन अब्दुल अज़ीज़ ने इससे अर्थ निकालते हुए अपने राज्यकाल में यहूदी तथा ईसाईयों को भी मस्जिद में प्रवेश से निषेधाज्ञा लागू किया था। (इब्ने कसीर)

[3]मूर्तिपूजकों को रोकने के उपरान्त कुछ मुसलमानों के दिलों में यह विचार आया कि हज के अवसर पर जो व्यापार के द्वारा लाभ होता था, वह अब न होगा। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि, इस व्यापार में कमी से डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। अल्लाह तआला अपनी कृपा से निकट भविष्य में तुम्हें धनवान कर देगा। अतः विजय के कारण धन तथा सामग्री अधिक मात्रा में प्राप्त हुई। फिर धीरे-धीरे सारा अरब मुसलमान हो गया। इस प्रकार पुनः हज ऋतु में हाजियों की संख्या उसी प्रकार हो गयी, अपितु उससे कहीं अधिक हो गयी तथा नित्य यह संख्या बढ़ती ही जा रही है।

مَا حَرَّمَ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَلَا يَدِيْنُوْنَ دِيْنَ الْحَقِّ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حَتّٰى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَّدٍ وَّهُمْ صٰغِرُوْنَ ﴿٢٩﴾

तथा उसके रसूल के द्वारा निषेधित वस्तु को वर्जित नहीं समझते, न सत्य धर्म को स्वीकार करते हैं उन लोगों में से जिन्हें किताब प्रदान की गयी है, यहाँ तक कि वह अपमानित होकर अपने हाथों से सुरक्षा कर अदा करें ।[1]

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ عُزَيْرُ ُۨ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصٰرَى الْمَسِيْحُ ابْنُ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ ۚ يُضَاهِــُٔوْنَ قَوْلَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْ قَبْلُ ؕ قٰتَلَهُمُ اللّٰهُ ۚ اَنّٰى يُؤْفَكُوْنَ ﴿٣٠﴾

(३०) यहूदी कहते हैं कि उज़ैर अल्लाह का पुत्र है और इसाई कहते हैं कि मसीह अल्लाह का पुत्र है । यह कथन केवल उनके मुख की बात है । पूर्व के विश्वासहीनों के कथन का यह भी समानता करने लगे हैं । अल्लाह इनका नाश करे यह कहाँ फिरे जा रहे हैं ?

اِتَّخَذُوْٓا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ

(३१) उन लोगों ने अल्लाह को छोड़ कर अपने विद्वानों तथा धर्माचारियों को रब्ब (पोषक) बनाया है,[2] तथा मरियम के पुत्र मसीह को ।

---

[1]मिश्रणवादियों से लड़ने के आदेश के पश्चात यहूदियों तथा ईसाईयों से लड़ने का आदेश दिया जा रहा है । यदि वे इस्लाम धर्म स्वीकार करें अथवा सुरक्षा कर दे कर मुसलमानों की शरण में रहना स्वीकार कर लें । सुरक्षा कर को "जिज़य: " कहते हैं । यह उनके लिए है जो गैर मुस्लिम हैं, परन्तु इस्लामी राज्य में रह रहे हों । यह एक वार्षिक निर्धारित कर है । इस कर के अदा करने के पश्चात उनके धन, मान-सम्मान, जीवन की सुरक्षा का दायित्व मुस्लिम राज्य पर आ जाता है यहूदी तथा ईसाई इसके अतिरिक्त की वे अल्लाह तथा आख़िरत के दिन पर ईमान रखते थे, उनके विषय में कहा गया है कि वे अल्लाह तथा अन्त दिवस पर ईमान नहीं रखते थे इससे यह विदित होता है कि जब तक मनुष्य उस प्रकार का ईमान न रखे जिस प्रकार अल्लाह ने अपने पैग़म्बरों (दूतों) के द्वारा बतलाया है, उस समय तक उसका अल्लाह पर ईमान विश्वासनीय न होगा । तथा यह भी स्पष्ट है कि उन के अल्लाह पर ईमान को विश्वास के अयोग्य इसलिए कहा गया कि यहूदी तथा ईसाईयों ने आदरणीय उज़ैर तथा आदरणीय मसीह को अल्लाह का पुत्र तथा पूज्य का विश्वास गढ़ लिया था, जैसा कि अगली आयत में उनके इस विश्वास को स्पष्ट किया गया है ।

[2]इसकी व्याख्या आदरणीय अदी पुत्र हातिम के द्वारा वर्णित हदीस से स्पष्ट है, वह कहते हैं कि मैं ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से यह आयत सुनकर पूछा कि

وَالْمَسِيحَ ابْنَ مَرْيَمَ ۚ وَمَا أُمِرُوا إِلَّا لِيَعْبُدُوا إِلَٰهًا وَاحِدًا ۖ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ ۚ سُبْحَانَهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٣١﴾

यद्यपि कि उन्हें एक अकेले अल्लाह ही की उपासना का आदेश दिया गया था। जिसके अतिरिक्त कोई पूज्य नहीं, वह उनके मिश्रण करने से पवित्र है।

يُرِيدُونَ أَن يُطْفِئُوا نُورَ اللَّهِ بِأَفْوَاهِهِمْ وَيَأْبَى اللَّهُ إِلَّا أَن يُتِمَّ نُورَهُ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ﴿٣٢﴾

(३२) वह अल्लाह की ज्योति को अपने मुखों से बुझा देना चाहते हैं। तथा अल्लाह इंकार करता है किन्तु यह कि अपनी ज्योति को पूर्ण करे यद्यपि अधर्मी लोग अप्रसन्न हों।[1]

यहूदियों तथा ईसाईयों ने अपने विद्वानों की कभी पूजा नहीं की, फिर यह क्यों कहा गया कि, उन्होंने उनको स्वामी वना लिया ? आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "यह ठीक है कि, उन्होंने उनकी पूजा कभी नहीं की, परन्तु यह बात सत्य है कि उनके विद्वानों ने जिस वस्तु को उचित कहा उसको उचित तथा जिसको अनुचित कहा उसको अनुचित समझा। यही उनकी पूजा है।" (सहीह त्रिमिज़ी लिल अलबानी संख्या २४७१) क्योंकि वर्जित तथा मान्य करने का अधिकार केवल अल्लाह को है। यही अधिकार यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य के अन्दर स्वीकार करता है, तो वह व्यक्ति उसकी पूजा करता है। इस आयत में उन लोगों को बड़ी चेतावनी है, जो अपने नेताओं तथा विचारकों के वैध तथा अवैध को मान्यता देते हैं। उनके कथन के समक्ष क़ुरआन की आयतों तथा हदीसों को भी स्वीकार करने को तैयार नहीं होते।

[1]अर्थात अल्लाह ने ईशदूत (आप पर परमेश्वर का दया एवं शान्ति हो) को जो प्रकाश तथा सत्य धर्म दे कर भेजा है। यहूदी तथा इसाई एवं मूर्तिपूजक चाहते हैं कि उसे विवाद तथा लांछन से मिटा दें, तो उनकी तुलना उस जैसी है जो अपनी फूँक से सूर्य की किरण तथा चन्द्रमा के प्रकाश को बुझाने का प्रयत्न करे। तो जिस प्रकार यह असम्भव है, उसी प्रकार जो सत्य धर्म अल्लाह तआला ने अपने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को देकर भेजा है, उसको मिटाना भी असम्भव है। वह सभी धर्मों पर विजयी होकर रहेगा। जैसाकि अगली आयत में अल्लाह ने फ़रमाया। काफ़िर का शाब्दिक अर्थ है छिपाने वाला। इसी कारण रात्रि को भी काफ़िर कहते हैं क्योंकि वह सभी वस्तुओं को अपने अंधकार में छिपा लेती है। कृषक को भी काफिर कहते हैं क्योंकि वह अनाज के दाने को धरती में छिपा देता है। अत: काफ़िर भी अल्लाह के प्रकाश को छिपाना चाहते हैं अथवा अपने दिलों में कुफ़्र तथा षड़यन्त्र तथा मुसलमानों एवं इस्लाम के विरुद्ध द्वेष तथा ईर्ष्या को छिपाये हुए हैं। इसलिए उन्हें काफ़िर कहा जाता है।

هُوَ الَّذِيٓ اَرْسَلَ رَسُوْلَهٗ بِالْهُدٰى وَدِيْنِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهٗ عَلَى الدِّيْنِ كُلِّهٖ ۙ وَلَوْ كَرِهَ الْمُشْرِكُوْنَ ﴿٣٣﴾

(३३) उसी ने अपने दूत (नराशंस) को सत्य मार्ग तथा सत्य धर्म के साथ भेजा कि उसे अन्य सभी धर्मों पर प्रभावी कर दे।[1] यद्यपि मिश्रणवादी बुरा मानें।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّ كَثِيْرًا مِّنَ الْاَحْبَارِ وَالرُّهْبَانِ لَيَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۗ وَالَّذِيْنَ يَكْنِزُوْنَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُوْنَهَا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۙ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۙ ﴿٣٤﴾

(३४) हे ईमानवालो ! अधिकतर पन्डित एवं पुजारी लोगों का धन अनृत से खा जाते हैं तथा अल्लाह के मार्ग से रोकते हैं।[2] एवं जो लोग सोने चाँदी का कोष रखते हैं तथा अल्लाह के मार्ग में व्यय नहीं करते उन्हें दुखद यातना का समाचार सुना दो।[3]

---

[1]तर्क तथा युक्ति के आधार पर यह प्रभुत्व हर समय प्राप्त है। परन्तु जब मुसलमानों ने धर्म के आदेशानुसार कर्म किया तो उन्हें सांसारिक प्रभुत्व प्राप्त हुआ। तथा अब भी मुसलमान अपने धर्म के अनुसार कार्य करने लगें तो उनका प्रभाव अवश्य सम्भावी है। इसलिए कि अल्लाह का वाअदा है कि अल्लाह के मानने वाले ही प्रभावशाली तथा विजयी होंगे। शर्त यह है कि मुसलमान अल्लाह वाले बन जायें।

[2]أحبار (अहबार) حبر (हिब्र) का बहुवचन है। यह ऐसे व्यक्ति को कहते हैं, जो बात को बड़ी सुन्दरतापूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने की विधि जानता हो। सुन्दर तथा आकर्षित वस्त्र को ثوب محبَّر, कहते हैं। तात्पर्य यहूदियों के विद्वना हैं رهبان (रूहबान) راهِب (राहिब) का बहुवचन है, जिसकी उत्पत्ति رهبة (रुहब:) से है इससे तात्पर्य इसाईयों के पन्डित हैं। कुछ के निकट इसाईयों के महात्मा हैं, विद्वानों के लिए इनके यहाँ قِسّيسين (क़िस्सीसीन) का शब्द है। ये दोनों ही अल्लाह के कथनों में परिवर्तन करके लोगों की इच्छाओं के अनुसार नियम बनाते हैं इस प्रकार लोगों कोअल्लाह के मार्ग से रोकते हैं। दूसरे इस प्रकार लोगों से माल ऐंठते हैं, जो उनके लिए अनुचित तथा अवैध था। दुर्भाग्य से मुसलमानों के विद्वानों में भी कुछ की यही दशा है। तथा इस प्रकार नबी सल्लाहु अलैहि वसल्लम की भविष्यवाणी सत्य होती है जिसमें आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया था. «لَتَتَّبِعُنَّ سُنَنَ مَنْ كَانَ قَبْلَكُمْ» (सहीह बुख़ारी किताबुल ऐतेसाम में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह फ़रमान अध्याय का शीर्षक है) "तुम पूर्व के समुदायों के रीति-रिवाज के अनुयायी अवश्य बनोगे।"

[3]आदरणीय अब्दुल्लाह बिन उमर फ़रमाते हैं कि यह ज़कात के आदेश से पूर्व का आदेश है। ज़कात के आदेश के पश्चात ज़कात द्वारा लोगों के माल की शुद्धता का साधन बताया है। इसलिए विद्वानों का कहना है कि जिस धन से ज़कात अदा कर दी

يَّوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا فِيْ نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَ جُنُوْبُهُمْ وَظُهُوْرُهُمْ ؕ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوْقُوْا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُوْنَ ﴿۳۵﴾

(३५) जिस दिन उस कोष को नरक की अग्नि में तपाया जायेगा फिर उससे उनके माथे तथा पार्श्व तथा पीठें दागी जायेंगी (उनसे कहा जायेगा) यह है जिसे तुमने अपने लिए कोष बना कर रखा था, तो अपने कोषों का स्वाद चखो।

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَ الْاَرْضَ مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ ؕ ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ ۬ۙ

(३६) महीनों की गणना अल्लाह के निकट अल्लाह के ग्रन्थ में बारह की है, उसी दिन से जब से आकाशों तथा धरती को उसने पैदा किया है। उनमें से चार सम्मान तथा आदर के हैं।[1] यही शुद्ध धर्म है।[2] तुम इन महीनों

जाये वह कोष नहीं है तथा जिससे जकात न दी जाय वह कोष है, जिस पर क़ुरआन की यह चेतावनी आयी है। अत: सहीह हदीस में है कि जो व्यक्ति अपने माल की जकात नहीं निकालता प्रलय के दिन उसके धन की अग्नि पट्टिकायें बनायी जायेंगी, जिससे उसके दोनों बाज़ूओं को, माथा को तथा कमर को जलाया जायेगा। यह दिन पचास हज़ार वर्ष का होगा तथा लोगों का निर्णय होने तक उसका यही हाल रहेगा, उसके पश्चात उसे स्वर्ग अथवा नरक में ले जाया जायेगा। (सहीह मुस्लिम किताबुज़्ज़कात) यह बिगड़े विद्वान तथा सूफ़ियों के पश्चात बिगड़े हुए धनवान हैं, तीनों पक्ष जनता में बिगाड़ के सबसे अधिक जिम्मेदार हैं। اللهم احفظنا منهم

[1] فِي كِتَابِ الله से तात्पर्य 'लौहे महफ़ूज़' (सुरक्षित पुस्तक) है अर्थात अल्लाह तआला के अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर लिखी है। अर्थात उत्पत्ति के आरम्भ से ही अल्लाह तआला ने बारह महीने निर्धारित कर दिये हैं, जिनमें से चार निषेधित हैं, जिनमें विशेष रूप से युद्ध तथा लड़ाई निषेध है। इसी बात को नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस प्रकार वर्णन किया है कि, युग घूम घाम कर फिर उसी अवस्था में लौट आया है, जिस अवस्था में उस समय था, जब अल्लाह ने आकाशों तथा धरती की सृष्टि की थी। वर्ष बारह महीनों का है, जिनमें से चार सम्मानित हैं, तीन निरन्तर ज़िलक़ाअद:, ज़िलहिज्जा, मुहर्रम तथा चौथा रजब जो जमादिल आख़िर तथा शाबान के मध्यमें है। (सहीह बुख़ारी संख्या ४४०६ तथा सहीह मुस्लिम संख्या १३०५) युग उसी अवस्था में आ गया का तात्पर्य यह है कि अरब के मूर्तिपूजक महीनों आगे पीछे उसी प्रकार से करते थे जिस प्रकार आजकल हिन्दू धर्म में पंडित करते हैं, जिसका विस्तृत वर्णन आगे आयेगा यह उसका अन्त है।

[2] अर्थात उन महीनों का उसी क्रम में होना, जो अल्लाह ने रखा है तथा जिनमें चार सम्मानित हैं। तथा यही गणित सही और संख्या पूर्ण है।

فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ أَنفُسَكُمْ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَافَّةً ۚ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ﴿٣٦﴾

में अपने प्राणों पर अत्याचार न करो।[1] तथा तुम सभी मूर्तिपूजकों से धर्मयुद्ध करो, जैसेकि वे तुम सभी से लड़ते हैं।[2] तथा जान रखो कि अल्लाह तआला परहेज़गारों के साथ है।

إِنَّمَا النَّسِيءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ ۖ يُضَلُّ بِهِ الَّذِينَ كَفَرُوا يُحِلُّونَهُ عَامًا وَيُحَرِّمُونَهُ عَامًا لِّيُوَاطِئُوا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللَّهُ فَيُحِلُّوا مَا حَرَّمَ اللَّهُ ۚ زُيِّنَ لَهُمْ سُوءُ أَعْمَالِهِمْ ۗ وَاللَّهُ

(३७) महीनों का आगे पीछे कर देना कुफ्र का परिवर्धन है।[3] उससे वह विपथ किये जाते हैं जो विश्वासहीन हैं। एक वर्ष को अवर्जित कर लेते हैं तथा एक वर्ष को आदरणीय बना लेते हैं कि अल्लाह ने जो निषेध रखा है उसकी गणना में तो समानता कर लें।[4] फिर जिसे निषेध किया है उसे

---

[1]अर्थात इन महीनों में रक्तपात करके उनका निरादर तथा अल्लाह के आदेशों की अवहेलना करके।

[2]परन्तु सम्मानित महीनों के व्यतीत होने के पश्चात। किन्तु यदि वह लड़ने पर बाध्य कर दें तो फिर सम्मानित महीनों में तुम्हारे लिए लड़ना भी उचित होगा।

[3]"نَسِيءٌ" (नसीउन) के अर्थ 'पीछे करने के' हैं। अरबों में भी सम्मानित महीनों में लूटमार, रक्तपात तथा युद्ध को अप्रिय समझा जाता था। परन्तु निरन्तर तीन महीनों का आदर करना रक्तपात से रुके रहना, उनके लिए कठिन था। इसलिए उसका समाधान उन्होंने यह निकाल रखा था कि जिस सम्मानित महीने में वे रक्तपात करना चाहते, वह कर लेते तथा यह घोषणा कर देते कि इस सम्मानित महीने के बदले अमुक महीना सम्मानित होगा। जैसे मोहर्रम के महीने का आदर समाप्त करके सफर के महीने को सम्मानित घोषित कर देते। इस प्रकार आदर वाले महीनों में परिवर्तन तथा हेर फेर का परिवर्धन लिया करते थे। इसको 'नसी' कहा जाता था। अल्लाह तआला ने उसके विषय में फरमाया कि यह अधर्म का परिवर्धन है क्योंकि इस अदल-बदल से उद्देश्य लड़ाई-झगड़ा, रक्तपात तथा सांसारिक लाभ के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। तथा नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी उसके समापन की घोषणा इस प्रकार की कि युग घूम-घूमा के अपनी वास्तविक अवस्था में आ गया। अर्थात अब भविष्य में इसका क्रम इसी प्रकार रहेगा, जिस प्रकार उत्पत्ति के प्रारम्भ से चला आ रहा है।

[4]अर्थात एक महीने का आदर समाप्त करके उसके स्थान पर दूसरे महीने को आदरणीय घोषित कर देने से उनका उद्देश्य यह होता था कि अल्लाह तआला ने जो चार आदर

لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٣٧﴾

वैधानिक बना लें, उनके कुकर्म उन्हें सत्कर्म दिखा दिये गये हैं तथा अल्लाह काफ़िरों को मार्गदर्शन नहीं देता है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَا لَكُمْ اِذَا قِيْلَ لَكُمُ انْفِرُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى الْاَرْضِ ؕ اَرَضِيْتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مِنَ الْاٰخِرَةِ ۚ فَمَا مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا قَلِيْلٌ ﴿٣٨﴾

(३८) हे ईमानवालो ! तुम्हें क्या हो गया है ? कि जब तुम से कहा जाता है कि चलो अल्लाह के मार्ग में प्रस्थान करो तो तुम धरती पकड़ लेते हो क्या तुम परलोक के बदले दुनिया के जीवन पर ही रीझ गये हो। सुनो ! दुनिया का जीवन परलोक की तुलना में अति तुच्छ है।

اِلَّا تَنْفِرُوْا يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ وَّيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّوْهُ شَيْـًٔا ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٣٩﴾

(३९) यदि तुमने प्रस्थान न किया, तो अल्लाह (तआला) तुम्हें दुखदायी दण्ड देगा तथा तुम्हारे अतिरिक्त अन्य लोगों को बदल लायेगा, तुम अल्लाह (तआला) को कोई हानि नहीं पहुँचा सकते ।[1] तथा अल्लाह तआला सर्वशक्तिमान है।

वाले महीने रखे हैं, उनकी गणना पूरी कर दी जाये, अर्थात गणना पूरी करने में अल्लाह तआला का पक्ष करते थे, परन्तु अल्लाह तआला ने रक्तपात, युद्ध तथा लड़ाई-झगड़े से जो मना किया था, उसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी, बल्कि उन्हीं अत्याचारी प्रवृत्तियों के कारण ही उनके क्रम में फेर बदल करते थे।

[1]रोम के ईसाई राजा हरकूलिस के विषय में यह सूचना मिली कि वह मुसलमानों के विरुद्ध युद्ध की तैयारी कर रहा है ।अत: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी इसके लिए तैयारी का आदेश दे दिया। यह शव्वाल ९ हिजरी की घटना है। ग्रीष्म ॠतु थी तथा लम्बी यात्रा थी। कुछ मुसलमानों तथा अवसरवादियों को यह आदेश भारी लगा जिसका वर्णन इस आयत में किया गया है। तथा उन्हें सचेत तथा सावधान किया गया है । यह तबूक का युद्ध कहलाता है, जो वास्तव में नहीं हुआ। २० दिन मुसलमान सीरिया के निकट तबूक के स्थान पर प्रतीक्षा करके वापस आ गये। इसको कठिनाईयों का युद्ध कहा जाता है। क्योंकि इस लम्बी यात्रा में इस सेना को अधिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा था। اثَّاقَلْتُمْ अर्थात आलस्य करने तथा पीछे रहना चाहते हो। इसका प्रदर्शन कुछ लोगों की ओर से हुआ, परन्तु इसको सम्बोधित सभी से कर दिया गया। (फ़तहुल क़दीर)

إِلَّا تَنصُرُوهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللَّهُ إِذْ أَخْرَجَهُ الَّذِينَ كَفَرُوا ثَانِيَ اثْنَيْنِ إِذْ هُمَا فِي الْغَارِ إِذْ يَقُولُ لِصَاحِبِهِ لَا تَحْزَنْ إِنَّ اللَّهَ مَعَنَا ۖ فَأَنزَلَ اللَّهُ سَكِينَتَهُ عَلَيْهِ وَأَيَّدَهُ بِجُنُودٍ لَّمْ تَرَوْهَا وَجَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ كَفَرُوا السُّفْلَىٰ ۗ وَكَلِمَةُ اللَّهِ هِيَ الْعُلْيَا ۗ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٤٠﴾

(४०) यदि तुम उसकी (ईशदूत मुहम्मद) सहायता न करो तो अल्लाह ही ने उसकी सहायता की उस समय जब अधर्मियों ने उसे (देश से) निकाल दिया था। दो में से दूसरा जबकि वह दोनों गुफ़ा में थे जब यह अपने साथी से कह रहे थे कि चिन्ता न करो अल्लाह हमारे साथ है।[1] तब अल्लाह ही ने अपनी ओर से शान्ति उतार कर उन सेनाओं से उसकी सहायता की जिन्हें तुम ने देखा भी नहीं।[2] उसने काफ़िरों की बात नीची कर दी तथा उच्च एवं श्रेष्ठ तो अल्लाह का ही कथन है।[3] अल्लाह (तआला) प्रभावशाली तथा विवेकी है।

---

[1]धर्मयुद्ध से पीछे रहने वालों अथवा उससे प्राण छुड़ाने वालों से कहा जा रहा है कि यदि तुम सहायता नही करते हो, तो अल्लाह को तुम्हारे सहायता की आवश्यकता भी नहीं है। अल्लाह तआला ने अपने संदेशवाहक की उस समय भी सहायता की, जब उसने गुफ़ा में शरण ली थी तथा अपने साथी (आदरणीय अबू बक्र सिद्दीक) से कहा था, "चिन्ता न करो अल्लाह हमारे साथ है।" इस की विस्तृत हदीस आती है। आदरणीय अबू बक्र सिद्दीक (رضي الله عنه) फ़रमाते हैं, जब हम लोग गुफ़ा में थे, तो मैं ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से कहा "यदि इन मूर्तिपूजकों ने (जो हमारी खोज में हैं) अपने पैरों की ओर देखा, तो हमें देख लेंगे।" परम आदरणीय नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया,

« يَا أَبَا بَكْرٍ! مَا ظَنُّكَ بِاثْنَيْنِ اللهُ ثَالِثُهُمَا »

"हे अबू बक्र ! तुम्हारा उन दो के विषय में क्या विचार है जिसका तीसरा अल्लाह है।" (सहीह बुख़ारी तफ़सीर सूर: तौब:)

[2]य सहायता की वे दो परिस्थितियाँ वर्णन की हैं जिन से अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की सहायता की गयी। एक हृदय की शान्ति तथा दूसरी फ़रिश्तों का समर्थन।

[3]काफ़िरों के कथन से शिर्क तथा अल्लाह के कथन से तौहीद (एकेश्वरवाद) का तात्पर्य है। जिस प्रकार एक हदीस में वर्णन किया गया है। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि

(४१) निकल खड़े हो जाओ हल्के-फुल्के हो तो भी तथा भारी-भरकम हो तो भी,[1] तथा अल्लाह के मार्ग में अपने तन-मन-धन से धर्मयुद्ध करो, यही तुम्हारे लिए अच्छा है, यदि तुम में ज्ञान हो।

اِنْفِرُوْا خِفَافًا وَّثِقَالًا وَّجَاهِدُوْا بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝۴۱

(४२) यदि शीघ्र प्राप्त होने वाली धन-सामग्री होती[2] तथा हल्की-सी यात्रा होती तो ये अवश्य आप के पीछे हो लेते।[3] परन्तु उन पर तो दूरी तथा दूरी के कष्ट पड़ गये। तथा अब तो ये अल्लाह की सौगन्ध खायेंगे कि यदि हम में शक्ति तथा सामर्थ्य होता तो

لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيْبًا وَّسَفَرًا قَاصِدًا لَّاتَّبَعُوْكَ وَلٰكِنْۢ بَعُدَتْ عَلَيْهِمُ الشُّقَّةُ ؕ وَسَيَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ ۚ يُهْلِكُوْنَ

वसल्लम से पूछा गया। "एक व्यक्ति वीरता के प्रदर्शन के लिए लड़ता है, एक अपने जाति के सम्मान तथा आदर के लिए लड़ता है, तथा एक अन्य देखावे अथवा छल-कपट के लिए लड़ता है। इसमें से अल्लाह के मार्ग में लड़ने वाला कौन है ?" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "जो इसलिए लड़ता है कि अल्लाह का कथन सर्वोच्च हो जाये, वह अल्लाह के मार्ग में लड़ता है।" (सहीह बुखारी किताबुल इल्म व मुस्लिम किताबुल इमार:)

[1]इसके विभिन्न भावार्थ वर्णन किये जाते हैं। व्यक्तिगत रूप से अथवा सामूहिक रूप से, प्रसन्नता से अथवा अप्रसन्नता से, निर्धन हो अथवा धनवान हो, युवक हो अथवा वृद्ध हो, पैदल हो अथवा सवार हो, विवाहित हो अथवा अविवाहित हो, वह प्रस्थान करने वालों में से हो अथवा रह जाने वालों में। इमाम शौकानी फ़रमाते हैं कि आयत का प्रभाव सभी क्षेत्र पर हो सकता है क्योंकि आयत का अर्थ यह है कि तुम प्रस्थान करो, चाहे आवागमन तुम्हारे लिए बोझ हो अथवा हल्का। तथा इस भावार्थ में वर्णित सभी भावार्थ आ जाते हैं।

[2]यहाँ से उन लोगों का वर्णन हो रहा है जिन्होंने कारण बता कर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से आज्ञा ले ली थी। जब कि वास्तव में उनके पास कोई कारण नहीं था। عَرَض से तात्पर्य जो सांसारिक लाभ सामने आयें, अर्थ है युद्ध में प्राप्त धन सामग्री।

[3]अर्थात आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ धर्मयुद्ध में सम्मिलित होते, परन्तु लम्बी यात्रा ने उन्हें बहाने बनाने पर विवश कर दिया।

أَنفُسَهُمْ ۚ وَاللَّهُ يَعْلَمُ إِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿٤٢﴾

हम अवश्य आप के साथ निकलते, यह अपने प्राणों को स्वयं ही विनाश की ओर डाल रहे हैं ।[1] इनके झूठे होने का सत्य ज्ञान अल्लाह को है ।

عَفَا اللَّهُ عَنكَ لِمَ أَذِنتَ لَهُمْ حَتَّىٰ يَتَبَيَّنَ لَكَ الَّذِينَ صَدَقُوا وَتَعْلَمَ الْكَاذِبِينَ ﴿٤٣﴾

(४३) अल्लाह तुझे क्षमा कर दे, तूने उन्हें क्यों आज्ञा दे दी, बिना इसके कि तेरे समक्ष सत्यवादी लोग स्पष्ट रूप से प्रकट हो जायें तथा तू झूठे लोगों को भी जान ले ।[2]

لَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ أَن يُجَاهِدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنفُسِهِمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالْمُتَّقِينَ ﴿٤٤﴾

(४४) अल्लाह पर तथा क़ियामत (प्रलय) के दिन पर ईमान तथा विश्वास रखने वाले तो माल से तथा जान से धर्मयुद्ध करने से रूके रहने की कभी भी तुझ से अनुमति नहीं माँगेंगे[3] और अल्लाह तआला सदाचारियों को भली-भाँति जानता है ।

---

[1]अर्थात झूठी सौगन्ध खाकर । क्योंकि झूठी सौगन्ध खाना महापाप है ।

[2]यह नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा जा रहा है कि धर्मयुद्ध में सम्मिलित न होने के लिए आज्ञा मांगने वालों को तूने क्यों बिना मालूम किये कि इसके पास ठोस कारण भी हैं या नहीं ? आज्ञा दे दी । परन्तु इस चेतावनी में भी प्रेम के पक्ष का वर्चस्व है, इसलिए कि इस भूल पर क्षमा का स्पष्टीकरण पहले कर दिया गया । याद रहे कि यह चेतावनी इसलिए कि आज्ञा देने में शीघ्रता की गयी तथा पूर्ण रूप से मालूम करने की आवश्यकता नही समझी गयी । वरन् खोज करने के पश्चात आवश्यक लोगों को आज्ञा प्रदान करने की आप को आज्ञा थी जैसा कि फ़रमाया गया ।

﴿ فَإِذَا اسْتَأْذَنُوكَ لِبَعْضِ شَأْنِهِمْ فَأْذَن لِّمَن شِئْتَ مِنْهُمْ ﴾

"जब यह लोग तुझ से अपने कुछ कर्मों के कारण आज्ञा मांगें, तो जिसको तू चाहे आज्ञा प्रदान कर दे ।"(सूर: अल-नूर-६२)

"जिसको चाहे" का अर्थ यह है कि जिसके पास उचित कारण हो, उसे आज्ञा प्रदान करने का अधिकार तुझे प्राप्त है ।

[3]यह मात्र शुद्ध ईमानदारों के व्यवहार का वर्णन है, बल्कि उनका तो आचरण एवं व्यवहार ही ऐसा है कि वह धर्मयुद्ध में आगे बढ़-चढ़कर अधिक प्रसन्नता के साथ भाग लेते हैं ।

(४५) यह आज्ञा तो तुझ से वही माँगते हैं, जिन्हें न अल्लाह पर ईमान है, न आख़िरत के दिन पर विश्वास है, जिनके दिल सन्देह में पड़े हुए है तथा यह अपने सन्देह ही में उद्विग्न हैं ।[1]

إِنَّمَا يَسْتَأْذِنُكَ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَارْتَابَتْ قُلُوبُهُمْ فَهُمْ فِي رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُونَ ﴿٤٥﴾

(४६) यदि उनका विचार [धर्मयुद्ध (जिहाद) पर] निकलने का होता, तो वह इस (यात्रा) के लिए संसाधन की तैयारी रखते ।[2] परन्तु अल्लाह को उनका उठना प्रिय नहीं था,

وَلَوْ أَرَادُوا الْخُرُوجَ لَأَعَدُّوا لَهُ عُدَّةً وَلَٰكِن كَرِهَ اللَّهُ انبِعَاثَهُمْ فَثَبَّطَهُمْ وَقِيلَ اقْعُدُوا مَعَ الْقَاعِدِينَ ﴿٤٦﴾

---

[1]यह उन मुनफ़िक़ों (अवसरवादियों) का वर्णन है, जिन्होंने झूठे बहाने बना कर रसूल करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से धर्मयुद्ध में भाग न लेने की आज्ञा प्राप्त कर ली थी । उनके विषय में कहा गया है कि ये अल्लाह पर तथा आख़िरत के दिन पर ईमान नहीं रखते । इसका अर्थ यह है कि इस ईमान के अभाव ने उनको धर्मयुद्ध में भाग न लेने पर विवश किया है। यदि ईमान इनके दिलों में सुदृढ़ होता तो न तो यह धर्मयुद्ध से भागते तथा न इनको शंका तथा संदेह ने घेरा होता।

टिप्पणी:- ध्यान रहे कि इस धर्मयुद्ध में भाग लेने के विषय में मुसलमानों की चार श्रेणियाँ थीं :

प्रथम वह मुसलमान जो बिना किसी सोच-विचार के तैयार हो गये, द्वितीय वे जिन्हें प्रारम्भ में कुछ उनके हृदय में विचलन उत्पन्न हुआ, परन्तु फिर उस विचलन से निकल आये, तृतीय वे जो कुछ वृद्धावस्था, रोग अथवा सवारी एवं यात्रा का खर्च उठाने में वास्तव मे योग्य नहीं थे। तथा जिन्हें स्वयं अल्लाह तआला ने भाग न लेने की आज्ञा प्रदान कर दी थी (उनका वर्णन आयत संख्या ९१ तथा ९२ में है) तथा चतुर्थ श्रेणी में वे जो मात्र आलस्य के कारण भाग न ले सके। तथा जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम वापस आये तो उन्होंने अपना पाप स्वीकार करके अपने आपको तौबा तथा दण्ड के लिए प्रस्तुत किया । इसके अतिरिक्त शेष सभी मुनाफ़िक़ (भ्रष्टाचारी) तथा उनके गुप्तचर थे। यहाँ मुसलमानों के प्रथम गिरोह तथा भ्रष्टाचारी (मुनाफ़िक़ों) का वर्णन है मुसलमानों की शेष तीन श्रेणियों का वर्णन आगे आयेगा।

[2]यह उन्हीं मुनाफ़िक़ों (द्वयवादियों) के विषय में कहा जा रहा है जिन्होंने झूठ बोल कर आज्ञा प्राप्त कर ली थी कि यदि वे धर्मयुद्ध में जाने का विचार रखते तो अवश्य जाने का प्रबन्ध करते।

इसलिए उन्हें कुछ करने से रोक दिया ।[1] तथा कह दिया गया कि तुम बैठने वालों के साथ बैठे ही रहो ।[2]

(४७) यदि यह तुम में मिल कर निकलते भी तो तुम्हारे लिए उपद्रव के अतिरिक्त अन्य कोई चीज़ न बढ़ाते ।[3] बल्कि तुम्हारे मध्य खूब घोड़े दौड़ाते तथा तुम में मतभेद डालने की खोज में रहते ।[4] उनके मानने वाले स्वयं तुम में उपस्थित हैं ।[5] तथा अल्लाह तआला अत्याचारियों को भली-भाँति जानता है ।

لَوْ خَرَجُوْا فِيْكُمْ مَّا زَادُوْكُمْ اِلَّا خَبَالًا وَّلَاۡ اَوْضَعُوْا خِلٰلَكُمْ يَبْغُوْنَكُمُ الْفِتْنَةَ ۚ وَفِيْكُمْ سَمّٰعُوْنَ لَهُمْ ۗ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ بِالظّٰلِمِيْنَ ۝

(४८) ये तो इससे पूर्व भी मतभेद उत्पन्न करने की खोज में रहे हैं तथा तेरे लिए कार्यों

لَقَدِ ابْتَغَوُا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ

---

[1] فَثَبَّطَهُمْ के अर्थ हैं उनको रोक दिया अर्थात पीछे रहना उनके लिए प्रिय बना दिया गया, अतः वह सुस्त हो गये तथा मुसलमानों के साथ नहीं निकले । (ऐसरूत्तफ़ासीर) अर्थ यह है कि अल्लाह के ज्ञान में उनके कुविचार तथा षड़यन्त्र थे, इसलिए अल्लाह के भाग्य का लिखा हुआ यही था कि वह न जायें ।

[2] यह या तो अल्लाह की उसी इच्छा के अनुरूप है जो भाग्य में लिखा हुआ था । अथवा अप्रसन्नता तथा क्रोध के कारण रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ओर से कहा गया है कि अच्छा ठीक है तुम स्त्रियों, बच्चों, रोगियों, तथा वृद्धों की श्रेणी में सम्मिलित होकर उनके समान घरों में बैठे रहो ।

[3] यह मुनाफ़िक़ (अवसरवादी) यदि इस्लामी सेना में सम्मिलित होते तो अपने त्रुटिपूर्ण विचार तथा परामर्श से मुसलमानों में उपद्रव ही का कारण बनते ।

[4] إِيضَاع का अर्थ होता है, अपनी सवारी तेज़ी से दौड़ाना । अर्थ यह है कि अपवाद आदि के द्वारा तुम्हारे अन्दर उपद्रव उत्पन्न करने में कोई कमी न रखते तथा उपद्रव का अर्थ एकता में फूट डालना तथा उनके मध्य द्वेष तथा घृणा उत्पन्न कर देना है ।

[5] इससे ज्ञात होता है कि मुनाफ़िक़ों (अवसरवादियों) के लिए गुप्तचर का कार्य करने वाले कुछ लोग मुसलमानों के साथ सेना में उपस्थित थे, जो मुनाफ़िक़ों (अवसरवादियों) को मुसलमानों की सूचनायें पहुँचाया करते थे ।

وَقَلَّبُوا لَكَ الْأُمُورَ حَتَّىٰ جَاءَ الْحَقُّ وَظَهَرَ أَمْرُ اللَّهِ وَهُمْ كَارِهُونَ ﴿٤٨﴾

को उलट-पुलट करते रहे हैं, यहाँ तक कि सत्य आ पहुँचा तथा अल्लाह का आदेश प्रभावी हो गया ।[1] इसके उपरान्त कि वे अप्रसन्नता में ही रहे ।[2]

وَمِنْهُم مَّن يَقُولُ ائْذَن لِّي وَلَا تَفْتِنِّي ۚ أَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوا ۗ وَإِنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيطَةٌ بِالْكَافِرِينَ ﴿٤٩﴾

(४९) उन में से कोई तो कहता है कि मुझे आज्ञा दे दीजिए मुझे विपदा में न डालिए, सचेत रहो कि वह तो भेद में पड़ चुके हैं तथा निःसंदेह नरक काफ़िरों को घेर लेने वाली है ।[3]

---

[1]इसीलिए उसने भूत तथा भविष्य की बातें तुम्हें सूचित कर दीं तथा यह भी वतला दिया कि जो मुनाफ़िक़ (भ्रष्टाचारी लोग) साथ नहीं गये, तो तुम्हारे पक्ष में अच्छा ही हुआ, यदि वे जाते तो ये-ये ख़राबियाँ उत्पन्न होतीं ।

[2]अर्थात ये मुनाफ़िक़ (भ्रष्टाचारी) तो जब से आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मदीना नगर में आये हैं, तभी से आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विरुद्ध षड़यन्त्र करने तथा सम्वन्धों को बिगाड़ने में तत्पर रहे हैं यहाँ तक कि बद्र में अल्लाह तआला ने मुसलमानों को विजय प्रदान की, जो इनके लिए अत्यधिक अप्रिय थी, इसी प्रकार ओहद के युद्ध के अवसर पर भी इन मुनाफ़िक़ों (अवसरवादियों) ने मार्ग से ही वापस होकर कठिनाई उत्पन्न करने की तथा उसके पश्चात सभी अवसरों पर बिगाड़ का प्रयत्न करते रहे । यहाँ तक कि मक्का विजय हो गया तथा अधिकतर अरब मुसलमान हो गये, जिस पर वे दुख से अपने हाथ मल रहे हैं ।

[3]"मुझे फितने (भेद) में न डालिए ।" इसका एक अर्थ तो यह होगा यदि आप मुझे आज्ञा नहीं देंगे तो मुझे विना आज्ञा रुकने पर अत्यधिक पाप होगा, इस आधार पर भेद 'पाप' के अर्थ में होगा । अर्थात मुझे पाप में न डालिए । दूसरा अर्थ भेद का विनाश है अर्थात मुझे साथ ले जाकर विनाश में न डालिए । कहा जाता है कि जद बिन क़ैस ने निवेदन किया कि मुझे साथ न ले जायें । रोम की स्त्रियों को देख कर मैं धैर्य न रख सकूंगा । इस पर नवी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुख फेर लिया और आज्ञा दे दी । उसके पश्चात आयत उतरी अल्लाह तआला ने फ़रमाया, "भेद में तो वह गिर चुके हैं ।" अर्थात धर्मयुद्ध में पीछे रहना तथा उससे प्राण चुराना, स्वयं एक भेद तथा महापाप है । जिसमें ये सम्मिलित हैं तथा मरने के पश्चात नरक की अग्नि उनको घेर लेने वाली है, जिससे भागने का कोई मार्ग उनके लिए न होगा ।

إِن تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ ۖ وَإِن تُصِبْكَ مُصِيبَةٌ يَقُولُوا قَدْ أَخَذْنَا أَمْرَنَا مِن قَبْلُ وَيَتَوَلَّوا وَّهُمْ فَرِحُونَ ﴿٥٠﴾

(५०) आपको यदि कोई भलाई प्राप्त हो जाये, तो उन्हें बुरा लगता है तथा कोई बुराई पहुँच जाये तो कहते हैं, हमने तो अपनी बात पूर्व ही से ठीक कर ली थी, फिर तो बड़े इतराते हुए लौटते हैं ।[1]

قُل لَّن يُصِيبَنَا إِلَّا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَنَا هُوَ مَوْلَانَا ۚ وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿٥١﴾

(५१) (आप) कह दीजिए कि हमें सिवाय अल्लाह के हमारे पक्ष में लिखे हुए के कोई चीज़ पहुँच ही नहीं सकती, वह हमारा मालिक है, तथा (आप कह दीजिए) ईमानवालों को अल्लाह ही पर पूर्ण भरोसा करना चाहिए ।[2]

قُلْ هَلْ تَرَبَّصُونَ بِنَا إِلَّا إِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ ۖ وَنَحْنُ نَتَرَبَّصُ بِكُمْ أَن يُصِيبَكُمُ اللَّهُ بِعَذَابٍ مِّنْ عِندِهِ أَوْ بِأَيْدِينَا ۖ فَتَرَبَّصُوا

(५२) कह दीजिये कि तुम हमारे विषय में जिस की प्रतीक्षा में हो, वह दो भलाईयों में से एक है,[3] तथा हम तुम्हारे पक्ष में इस बात की प्रतीक्षा में हैं कि या तो अल्लाह (तआला) तुम्हें अपने पास से कोई दंड दे अथवा हमारे

---

[1]सम्बन्धित कथन के आधार पर حسنة से यहाँ सफलता तथा लाभ एवं سيئة से असफ़लता, पराजय तथा इसी प्रकार की हानियाँ जो युद्ध में होती हैं, तात्पर्य है इसमें उनके आन्तरिक बुराईयों का प्रदर्शन है । जो मुनाफ़िक़ों (भ्रष्टाचारियों) के दिलों में था । इसलिए कि कष्ट पर प्रसन्न होना तथा भलाई प्राप्त होने पर दुख तथा कष्ट का आभास करना शत्रुता के कारणों को प्रदर्शित करता है ।

[2]यह मुनाफ़िक़ों (अवसरवादियों) के उत्तर में मुसलमानों के धैर्य, दृढ़ता तथा साहस के लिए कहा जा रहा है । क्योंकि जब मनुष्य को यह ज्ञात हो कि अल्लाह की ओर से भाग्य में लिखा हुआ प्रत्येक अवस्था में होना है तथा जो भी कठिनाई तथा भलाई हमें पहुंचती है, उसी अल्लाह द्वारा लिखित भाग्य का भाग है । तो मनुष्य के लिए कठिनाई का सहन करना सरल तथा उसका साहस बढ़ जाता है ।

[3]अर्थात सफलता अथवा शहादत, इन दोनों में से जो भी हमें प्राप्त हो हमारे लिए भलाई है ।

إِنَّا مَعَكُم مُّتَرَبِّصُونَ ﴿٥٢﴾

हाथों से ।[1] बस एक ओर तुम प्रतीक्षा करो, दूसरी ओर हम तुम्हारे साथ प्रतीक्षा कर रहे हैं ।

قُلْ أَنفِقُوا طَوْعًا أَوْ كَرْهًا لَّن يُتَقَبَّلَ مِنكُمْ ۖ إِنَّكُمْ كُنتُمْ قَوْمًا فَاسِقِينَ ﴿٥٣﴾

(५३) कह दीजिए कि तुम इच्छा अथवा अनिच्छा किसी प्रकार भी ख़र्च करो स्वीकार तो कदापि नहीं किया जायेगा ।[2] नि:संदेह तुम अवज्ञाकारी लोग हो ।

وَمَا مَنَعَهُمْ أَن تُقْبَلَ مِنْهُمْ نَفَقَاتُهُمْ إِلَّا أَنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللَّهِ وَبِرَسُولِهِ وَلَا يَأْتُونَ الصَّلَاةَ إِلَّا وَهُمْ كُسَالَىٰ وَلَا يُنفِقُونَ إِلَّا وَهُمْ كَارِهُونَ ﴿٥٤﴾

(५४) कोई कारण उनके ख़र्च को अस्वीकार होने का इसके अतिरिक्त नहीं कि ये अल्लाह तथा उसके रसूल के अवज्ञाकारी हैं तथा बड़े आलस्य से नमाज़ में आते हैं तथा बुरे दिल से ख़र्च करते हैं ।[3]

---

[1]अर्थात हम तुम्हारे लिए दो बुराईयों में से एक बुराई की प्रतीक्षा कर रहे हैं कि या तो आकाश से अल्लाह तआला तुम पर प्रकोप उतारे जिससे तुम नष्ट हो जाओ अथवा हमारे हाथों से ही अल्लाह तआला तुम्हें (वध करने, अथवा बन्दी बनाने आदि प्रकार की) दण्ड दिलवाये । वह दोनों बातों का सामर्थ्य रखता है ।

[2]أنفقوا आदेश है परन्तु यहाँ इस वाक्य का अर्थ यह है कि यदि तुम ख़र्च करोगे तो स्वीकार नहीं किया जायेगा । अथवा यह सूचक वाक्य के अर्थ में है । अर्थ यह है कि दोनों बातें समान हैं, ख़र्च करो अथवा न करो । अपनी इच्छा से अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करोगे तो भी अस्वीकार है । क्योंकि स्वीकर करने की प्रथम शर्त ईमान है और वही तुम्हारे अन्दर नहीं हैं तथा अप्रसन्नता से ख़र्च किया हुआ माल अल्लाह के यहाँ वैसे ही ठुकराया हुआ है, क्योंकि वहाँ उचित उद्देश्य नहीं उपस्थित है, जो स्वीकार करने के लिए आवश्यक है । यह आयत भी इसी प्रकार है जिस प्रकार यह है ।

﴿اسْتَغْفِرْ لَهُمْ أَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ﴾

"आप इनके लिए क्षमा माँगें अथवा न माँगें ।" (सूर: अल-तौब:-८०)

अर्थात दोनों बातें समान हैं ।

[3]इसमें उनके दान के अस्वीकार किये जाने के तीन कारण बताये गये हैं । प्रथम उनका अविश्वास तथा अवैज्ञा, द्वितीय नमाज़ में आलस्य । इसलिए कि वह इस पर न पुण्य की

فَلَا تُعْجِبْكَ أَمْوَالُهُمْ وَلَآ أَوْلَٰدُهُمْ ۚ إِنَّمَا يُرِيدُ ٱللَّهُ لِيُعَذِّبَهُم بِهَا فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا وَتَزْهَقَ أَنفُسُهُمْ وَهُمْ كَٰفِرُونَ ﴿٥٥﴾

(५५) अत: आपको उन के धन तथा सन्तान आश्चर्य में न डाल दें ।[1] अल्लाह यही चाहता है कि उन्हें दुनिया के जीवन में ही दंड दे ।[2] तथा उनके अविश्वास की ही अवस्था में उनके प्राण निकल जायें ।[3]

आशा रखते हैं तथा न उनको उसके दण्ड का कोई भय है क्योंकि आशा तथा भय, यह भी ईमान का लक्षण है, जिससे यह वंचित हैं । तथा तृतीय अनिच्छा से खर्च करना, तथा जिस कार्य में दिल की प्रसन्नता न हो, वह स्वीकार किस प्रकार हो सकता है ? अत: ये तीनों कारण ऐसे हैं कि इनमें एक-एक कारण भी कर्म के अस्वीकार के लिए पर्याप्त है । यदि ये तीनों कारण जहाँ एकत्रित हों, तो उस ठुकराये हुए कर्म को अल्लाह के दरबार में किस प्रकार स्वीकृति प्राप्त हो सकती है ।

[1]इसलिए कि यह सब परीक्षा के रूप में हैं । जिस प्रकार फ़रमाया :

﴿وَلَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ إِلَىٰ مَا مَتَّعْنَا بِهِۦٓ أَزْوَٰجًا مِّنْهُمْ زَهْرَةَ ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا لِنَفْتِنَهُمْ فِيهِ﴾

"तथा कई प्रकार के लोगों को जो हमने संसारिक जीवन में सुख- सुविधा की वस्तुओं से परिपूर्ण किया है, ताकि उनकी परीक्षा लें, उनकी ओर न देखो ।" (सूर: ताहा-१३१)

तथा फ़रमाया :

﴿أَيَحْسَبُونَ أَنَّمَا نُمِدُّهُم بِهِۦ مِن مَّالٍ وَبَنِينَ ۝ نُسَارِعُ لَهُمْ فِى ٱلْخَيْرَٰتِ ۚ بَل لَّا يَشْعُرُونَ﴾

"क्या यह लोग विचार करते है ? कि जो हम संसार में उनको धन तथा पुत्र से सहायता देते हैं (तो उस से) उनकी भलाई में हम शीघ्रता कर रहे हैं ? (नहीं) अपितु यह समझते ही नहीं ।" (सूर: अल-मोमिनून-५५तथा ५६)

[2]इमाम इब्ने कसीर तथा इमाम इब्ने जरीर तबरी ने इससे ज़कात तथा अल्लाह के मार्ग में दान करना तात्पर्य निकाला है । अर्थात इन मुनफ़िकों (अवसरवादियों) से ज़कात तथा दान तो (जो वह मुसलमान प्रदर्शित करने के लिए देते हैं) दुनिया में स्वीकार किये जायें ताकि इस प्रकार से उन्हें दुनिया में धन की मार भी दी जाये ।

[3]अन्त में उनकी मृत्यु अधर्म की अवस्था में होगी इसलिए कि वे अल्लाह के पैग़म्बर को सच्चे दिल से स्वीकार करने को तैयार ही नहीं तथा अपने अविश्वास तथा द्वयवाद पर ही अडिग तथा दृढ़ हैं ।

(५६) तथा ये अल्लाह की सौगन्ध खा-खा कर कहते हैं कि ये तुम्हारे गुट के लोग हैं, यद्यपि कि वे वास्तव में तुम्हारे नहीं, बात केवल इतनी है कि ये कायर लोग हैं ।[1]	وَيَحْلِفُونَ بِاللَّهِ إِنَّهُمْ لَمِنكُمْ وَمَا هُم مِّنكُمْ وَلَٰكِنَّهُمْ قَوْمٌ يَفْرَقُونَ ﴿٥٦﴾
(५७) यदि ये कोई सुरक्षित स्थान अथवा कोई गुफ़ा अथवा कोई भी सिर छिपाने का स्थान पा लें तो अभी उस ओर लगाम तोड़ कर उल्टे भाग छूटें ।[2]	لَوْ يَجِدُونَ مَلْجَأً أَوْ مَغَارَاتٍ أَوْ مُدَّخَلًا لَّوَلَّوْا إِلَيْهِ وَهُمْ يَجْمَحُونَ ﴿٥٧﴾
(५८) उनमें वे भी हैं जो दान के माल के बंटवारे के विषय में आप पर लांछन रखते हैं ।[3] यदि उसमें से उनको मिल जाये तो प्रसन्न हैं तथा यदि उसमें से न मिला तो तुरन्त ही बिगड़ खड़े होते हैं ।[4]	وَمِنْهُم مَّن يَلْمِزُكَ فِي الصَّدَقَاتِ فَإِنْ أُعْطُوا مِنْهَا رَضُوا وَإِن لَّمْ يُعْطَوْا مِنْهَا إِذَا هُمْ يَسْخَطُونَ ﴿٥٨﴾

---

[1]इस डर तथा भय के कारण मिथ्या शपथ ग्रहण करके यह सिद्ध करना चाहते हैं कि हम भी तुम में से ही हैं ।

[2]अर्थात अति तीव्र गति से दौड़ कर वे उन सुरक्षित स्थानों में चले जायें, इसलिए तुम से इनका जितना भी सम्बन्ध है वह प्रेम तथा निःस्वार्थ का नहीं, द्वेष, ईर्ष्या तथा घृणा पर है ।

[3]यह उनकी एक अन्य बहुत बड़े दोष का वर्णन है कि वह नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के प्रशस्त व्यक्तित्व को (نعوذ بالله) दान तथा युद्ध में प्राप्त सामग्री के बंटवारे में अन्यायकारी बताते । जिस प्रकार इब्ने जिलखुवैसरः के विषय में आता है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक बार बाँट रहे थे कि उसने कहा, "न्याय से काम लीजिए ।" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "अफसोस है तुझ पर, यदि मैं ही न्याय न करूँगा, तो फिर अन्य कौन करेगा ? " अल हदीस (सहीह बुखारी संख्या ६१६३ तथा सहीह मुस्लिम संख्या ७४४)

[4]अर्थात इस प्रकार का अभियोग लगाने का उद्देश्य मात्र धन का लाभ प्राप्त करना था कि इस प्रकार उन से भय के कारण उन्हें अधिक धन मिल जायेगा, अथवा वे अधिकारी हों अथवा न हों परन्तु भाग उन्हें अवश्य मिल जायेगा ।

(५९) यदि ये लोग अल्लाह तथा उसके रसूल के दिये हुए पर प्रसन्न रहते तथा कह देते कि अल्लाह हमें पर्याप्त है, अल्लाह हमें अपनी कृपा से देगा तथा उसका रसूल भी। हम तो अल्लाह ही से आशा रखने वाले हैं।

وَلَوْ أَنَّهُمْ رَضُوا مَا آتَاهُمُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ وَقَالُوا حَسْبُنَا اللَّهُ سَيُؤْتِينَا اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ وَرَسُولُهُ إِنَّا إِلَى اللَّهِ رَاغِبُونَ ﴿٥٩﴾

(६०) दान केवल भिक्षुकों[1] के लिए हैं तथा निर्धनों के लिए तथा उनके कार्यकर्ताओं के लिए तथा उनके लिए जिनके दिल परचाये जा रहे हों तथा दास मुक्ति एवं ऋणी लोगों के लिए तथा अल्लाह के मार्ग में तथा यात्रियों के लिए,[2] अनिवार्य है अल्लाह की ओर से तथा अल्लाह ज्ञान वाला विवेककारी है।

إِنَّمَا الصَّدَقَاتُ لِلْفُقَرَاءِ وَالْمَسَاكِينِ وَالْعَامِلِينَ عَلَيْهَا وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوبُهُمْ وَفِي الرِّقَابِ وَالْغَارِمِينَ وَفِي سَبِيلِ اللَّهِ وَابْنِ السَّبِيلِ فَرِيضَةً مِنَ اللَّهِ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٦٠﴾

[1]इस आयत में उस अभियोग का द्वार बन्द करने के लिए दान पाने योग्य लोगों का वर्णन किया जा रहा है। दान से तात्पर्य यहाँ अनिवार्य दान अर्थात ज़कात है। आयत का प्रारम्भ إنما से किया गया है, जो सीमित रूप करने का अर्थ देता है। तथा الصدقات में अरबी भाषा का अक्षर (अलिफ़ लाम) वस्तु की साधारणता के लिए है। अर्थात धन दान इन्हीं आठ प्रकारों में सीमित है; जिनकी चर्चा आयत में है। इनके अतिरिक्त ज़कात का धन किसी अन्य प्रयोग में लाना उचित नहीं। विद्वानों में इस बात पर मतभेद है कि इन आठों प्रकार को देना आवश्यक है अथवा इन में से जिस प्रकार के लिए अति आवश्यक हो उन में से एक अथवा अन्य को जिस पर इमाम अथवा विभाजनकारी उचित तथा आवश्यक समझे आवश्यकतानुसार ख़र्च करे। इमाम शाफ़ई आदि पहले मत के पक्ष में हैं कि ज़कात की राशि को बिना किसी सोच-विचार के आठ भागों में विभाजित करनी होगी, फिर आठों स्थान पर थोड़ी-थोड़ी ख़र्च की जाये तथा इमाम मालिक एवं इमाम अबू हनीफ़ा आदि दूसरे मत के पक्ष में हैं कि आवश्यकता तथा हित का ध्यान रखना आवश्यक है, जिस कार्य पर ख़र्च करने की आवश्यकता अधिक हो तथा परिस्थिति के अनुसार जितनी उनकी आवश्यकता हो उतनी ज़कात की राशि उन पर व्यय की जायेगी, चाहे दूसरे कार्यों के लिए राशि बचे अथवा न बचे इस विचार में जो औचित्य है वह प्रथम विचार में नहीं है।

[2]इन आठ प्रयोजनों पर ख़र्च करने का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है। (१,२) भिखारी तथा निर्धन लगभग निकट ही निकट है तथा एक अर्थ दूसरे से मिलता-जुलता है अर्थात

निर्धन को भिखारी तथा भिखारी को निर्धन कह ही लिया जाता है। इसलिए इनकी अलग-अलग परिभाषा पर बहुत मतभेद है। परन्तु दोनों के भावार्थ में यह बात तो स्पष्ट है कि जिनको आवश्यकता है तथा अपनी आवश्यकता को पूरा करने के लिए आवश्यक धन तथा साधन से वंचित हैं। उनको भिखारी तथा निर्धन कहा जाता है। निर्धन की परिभाषा के लिए हदीस आती है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "निर्धन वह नहीं है जो एक-एक, दो-दो निवाला अथवा खजूर के लिए घर-घर फिरता है, अपितु निर्धन वह है कि जिसके पास इतना धन भी न हो कि वह अपनी आवश्यकता पूरी कर ले, न अपने मुख पर इस प्रकार के आभास भी उत्पन्न होने दे कि लोग उसे निर्धन तथा आवश्यकता के योग्य समझ कर दान करें तथा न दूसरों के समक्ष हाथ फैलाये।" (सहीह बुख़ारी किताबुज़ ज़कात) हदीस में इस प्रकार निर्धन, वर्णित व्यक्ति ही को बनाया गया है। वरन् आदरणीय इब्ने अब्बास आदि से निर्धन की यह परिभाषा बतायी जाती है, कि जो हाथ फैलाने वाला हो, घूम-फिर कर अन्य लोगों के पीछे पड़कर माँगता हो तथा भिखारी वह है जो निर्धन होने के उपरान्त छल करने से बचे तथा लोगों से किसी वस्तु का प्रश्न न करे। (इब्ने कसीर) (३) कार्यकर्ता से तात्पर्य सरकारी कर्मचारी हैं, जो ज़कात व दान की राशि वसूल करते हैं तथा बाँटते हैं तथा उसका लेखा-जोखा रखते हैं। (४) आकर्षित हृदय एक तो वह काफ़िर हैं जो थोड़ा-थोड़ा इस्लाम की ओर आकर्षित होते हों तथा उनकी सहायता करने पर यह आशा हो कि वह मुसलमान हो जायेंगे। दूसरे नये मुसलमान हैं जिनको इस्लाम पर दृढ़ता से स्थित रहने के लिए सहायता की आवश्यकता हो। तीसरे वे लोग भी हैं जिनकी सहायता करने से यह आशा हो कि वह अपने क्षेत्र के लोगों को मुसलमानों पर आक्रमण करने से रोकेंगे तथा इस प्रकार वह निकटवर्ती कमज़ोर मुसलमानों की रक्षा करेंगे। यह और इस प्रकार की अन्य अवस्थायें हृदय आकर्षित करने की हैं, जिन पर ज़कात की राशि ख़र्च की जा सकती है। चाहे वर्णित लोग धनवान ही हों। कुछ लोगों के अनुसार यह प्रयोग समाप्त हो गया है परन्तु यह बात ठीक नहीं है। परिस्थितियाँ तथा समय के अनुसार हर काल में इस कर्त्तव्य पर ज़कात की राशि ख़र्च करना उचित है। (५) गर्दनें स्वतन्त्र कराने के लिए। कुछ विद्वानों ने केवल सम्बन्धित दास को लिया है। तथा अन्य विद्वानों ने सम्बन्धित तथा असम्बन्धित दोनों प्रकार के दास लिए हैं, इमाम शौकानी ने इसी विचार को प्रधानता दी है। (६) ऋणी से एक तो उन ऋणियों का तात्पर्य हैं जो अपने परिवार को जीवन-यापन तथा जीवन की आवश्यकता की पूर्ति करते-करते दूसरे लोगों के ऋण से दब गये हों तथा उनके पास नगद राशि भी नहीं है तथा ऐसा सामान भी नहीं है जिसे बेचकर वे उस ऋण को चुका सकें। दूसरे वे ज़िम्मेदार लोग जिन्होंने किसी अन्य की ज़मानत दी हो तथा फिर वह उसकी अदायगी के ज़िम्मेदार बना दिये गये हों, अथवा किसी की फ़सल नष्ट हो गयी हो, अथवा व्यापार में हानि हो गयी हो तथा इस कारण ऋणी हो गया हों। इन सभी लोगों को

وَمِنْهُمُ الَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ النَّبِيَّ وَيَقُوْلُوْنَ هُوَ اُذُنٌ ؕ قُلْ اُذُنُ خَيْرٍ لَّكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِيْنَ وَرَحْمَةٌ لِّلَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مِنْكُمْ ؕ وَالَّذِيْنَ يُؤْذُوْنَ رَسُوْلَ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٦١﴾

(६१) तथा उनमें से वे भी हैं जो पैग़म्बर (संदेशवाहक) को कष्ट देते हैं तथा कहते हैं कि हल्के कान का है। (आप) कह दीजिए कि वह कान तुम्हारी भलाई के लिए हैं।[1] वह अल्लाह पर ईमान रखता है तथा मुसलमानों की बातों का विश्वास करता है तथा तुम में से जो ईमानवाले हैं यह उनके लिए कृपा है, और रसूलुल्लाह (अल्लाह के दूत) को जो लोग कष्ट देते हैं उनके लिए दुखदायी यातना है।

يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ لَكُمْ لِيُرْضُوْكُمْ ۚ وَاللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗۤ اَحَقُّ اَنْ يُّرْضُوْهُ اِنْ كَانُوْا مُؤْمِنِيْنَ ﴿٦٢﴾

(६२) वे मात्र तुम्हें प्रसन्न करने के लिए तुम्हारे समक्ष अल्लाह की सौगंध खा जाते हैं हालाँकि यदि यह ईमानदार होते तो अल्लाह तथा उसके रसूल प्रसन्न किये जाने के अधिक अधिकारी थे।

ज़कात की राशि से सहायता करना उचित है। (७) अल्लाह के मार्ग से तात्पर्य धर्मयुद्ध है अर्थात युद्ध की सामग्री तथा आवश्यकताओं एवं मुजाहिद (चाहे वह मालदार ही हो) पर ज़कात की राशि ख़र्च करनी उचित है। तथा हदीसों में आता है कि हज तथा उमर: भी अल्लाह के मार्ग में ही आता है। इसी प्रकार कुछ विद्वानों के निकट तबलीग़ (निमन्त्रण) तथा आमन्त्रण भी अल्लाह के मार्ग में सम्मिलित है क्योंकि इसका भी उद्देश्य अल्लाह के कथन को जन-जन तक पहुँचाना है। (८) मार्ग के लोगों से तात्पर्य यात्री हैं। अर्थात कोई भी व्यक्ति यात्रा के समय सहायता का पात्र हो गया हो, तो चाहे वह अपने देश में धनवान ही हो, उसकी सहायता ज़कात की राशि से की जा सकती है।

[1]यहाँ से पुन: मुनाफ़िक़ों (द्वयवादियों) की चर्चा हो रही है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विरुद्ध एक लांछन यह उन्होंने लगाया कि यह कान का कच्चा (अथवा हल्का) है। अर्थ यह है कि यह हर व्यक्ति की बात सुन लेता है (अर्थात यह आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज्ञान तथा कृपा एवं क्षमा करने के गुणों से उन्हें धोखा हुआ)। अल्लाह ने फ़रमाया कि नहीं, हमारा पैग़म्बर उपद्रव तथा अशान्ति की कोई बात नहीं सुनता, जो भी सुनता है, तुम्हारा उसमें हित, पुण्य तथा भलाई है।

(६३) क्या ये नहीं जानते कि जो भी अल्लाह का तथा उसके रसूल का विरोध करेगा उस के लिए नि:संदेह नरक की अग्नि है, जिसमें वे सदैव रहने वाले हैं, यह बहुत बड़ा अपमान है।

اَلَمْ يَعْلَمُوْٓا اَنَّهٗ مَنْ يُّحَادِدِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاَنَّ لَهٗ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدًا فِيْهَا ؕ ذٰلِكَ الْخِزْيُ الْعَظِيْمُ ﴿٦٣﴾

(६४) अवसरवादियों को (हर समय) यह भय लगा रहता है कि कहीं (मुसलमानों) पर कोई आयत न उतरे, जो उनके दिलों की बातें उन्हें बता दे। कह दीजिए कि तुम उपहास उड़ाते रहो। नि:संदेह अल्लाह तआला उसे व्यक्त करने वाला है जिससे तुम भयभीत हो।

يَحْذَرُ الْمُنٰفِقُوْنَ اَنْ تُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ سُوْرَةٌ تُنَبِّئُهُمْ بِمَا فِيْ قُلُوْبِهِمْ ؕ قُلِ اسْتَهْزِءُوْا ۚ اِنَّ اللّٰهَ مُخْرِجٌ مَّا تَحْذَرُوْنَ ﴿٦٤﴾

(६५) यदि आप उनसे पूछें तो साफ कह देंगे कि हम तो यूँ ही आपस में हँस-बोल रहे थे। कह दीजिए कि अल्लाह, उसकी आयतें तथा उसका रसूल ही तुम्हारी हंसी उपहास के लिए शेष रह गये हैं ?[1]

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ لَيَقُوْلُنَّ اِنَّمَا كُنَّا نَخُوْضُ وَنَلْعَبُ ؕ قُلْ اَبِاللّٰهِ وَاٰيٰتِهٖ وَرَسُوْلِهٖ كُنْتُمْ تَسْتَهْزِءُوْنَ ﴿٦٥﴾

[1]मुनाफ़िक़ (अवसरवादी) अल्लाह की आयतों का उपहास उड़ाते थे, ईमानवालों का अपमान करते, यहाँ तक कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विषय में अपशब्द का प्रयोग करने में संकोच न करते, जिसकी सूचना किसी प्रकार से ईमानवालों तथा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हो जाती, परन्तु यदि उन से पूछा जाता तो साफ़ मुकर जाते तथा कहते कि हम तो आपस में इसी प्रकार हंसी-मज़ाक़ कर रहे थे। अल्लाह तआला ने फ़रमाया, "हंसी-मज़ाक़ के लिए तुम्हारे समक्ष अल्लाह तथा उसकी आयतें एवं उसका रसूल ही रह गया है ?" अर्थ यह कि यदि तम्हारा उद्देश्य आपस में हंसी-मज़ाक़ का होता तो उसमें अल्लाह, उसकी आयतें तथा रसूल मध्य में क्यों आते ? ये नि:सन्देह उस द्वेष तथा ईर्ष्या का संकेत है, जो अल्लाह की आयतों तथा हमारे पैग़म्बर के विरुद्ध तुम्हारे दिलों में स्थित है।

لَا تَعْتَذِرُوْا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ ۭ اِنْ نَّعْفُ عَنْ طَاۗىِٕفَةٍ مِّنْكُمْ نُعَذِّبْ طَاۗىِٕفَةًۢ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا مُجْرِمِيْنَ ۝٦٦

(६६) तुम बहाने न बनाओ, निःसंदेह तुम अपने ईमान लाने के पश्चात बेईमान हो गये ।[1] यदि हम तुम में से कुछ लोगों से अनदेखी भी कर लें,[2] तो कुछ लोगों को उनके अपराध का कठोर दण्ड भी देंगे ।[3]

اَلْمُنٰفِقُوْنَ وَالْمُنٰفِقٰتُ بَعْضُهُمْ مِّنْۢ بَعْضٍ ۘ يَاْمُرُوْنَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمَعْرُوْفِ وَيَقْبِضُوْنَ اَيْدِيَهُمْ ۭ نَسُوا اللّٰهَ

(६७) सभी मुनाफ़िक़ (अवसरवादी) पुरुष तथा स्त्री आपस में एक ही हैं ।[4] ये बुरी बातों का आदेश देते हैं तथा भली बातों से रोकते हैं तथा अपनी मुठ्ठी बन्द रखते हैं ।[5] ये अल्लाह को भूल

---

[1]अर्थात तुम जो ईमान प्रदर्शित करते रहे हो अल्लाह तथा उसके रसूल के उपहास के पश्चात उसका कोई महत्व नहीं । प्रथम तो वह भी भ्रष्टाचार पर ही आधारित था । फिर भी उसी के कारण तुम्हारी गणना मुसलमानों में होती थी, परन्तु अब उसका भी स्थान समाप्त हो गया ।

[2]इससे तात्पर्य ऐसे लोग हैं, जिन्हें अपनी त्रुटि का आभास हो गया तथा उन्होंने क्षमा-याचना कर ली एवं निःस्वार्थी मुसलमान बन गये ।

[3]यह वे लोग हैं जिन्हें तौबा का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ तथा अधर्म एवं भ्रष्टाचार में लिप्त रहे । इसीलिए उस यातना का कारण भी बता दिया गया है कि वे अपराधी हैं ।

[4]स्वार्थी जो सौगन्ध खाकर मुसलमानों को विश्वास दिलाया करते थे कि "हम तुम ही में से हैं" अल्लाह तआला ने इसका खण्डन किया कि ईमानवालों से उनका क्या सम्बन्ध ? परन्तु यह सभी अवसरवादी चाहे पुरुष हों अथवा स्त्रियाँ एक ही हैं अर्थात कुफ़्र तथा भ्रष्टाचार में एक, दूसरे से बढ़-चढ़ कर हैं । आगे उनके दुर्गुणों को व्यक्त किया जा रहा है । जो ईमानवालों के गुणों के ठीक प्रतिकूल तथा विपरीत हैं ।

[5]इससे तात्पर्य कंजूसी है अर्थात ईमानवालों का गुण अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करना है तथा पाखण्डी का इसके विपरीत कंजूसी । अर्थात अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करने में संकोच करना है ।

فَنَسِيَهُمْ ۗ إِنَّ الْمُنَافِقِينَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ۝٦٧

गये, अल्लाह ने भी उन्हें भुला दिया।[1] नि:संदेह मुनाफ़िक़ (द्वयवादी) ही भ्रष्टाचारी हैं।

وَعَدَ اللَّهُ الْمُنَافِقِينَ وَالْمُنَافِقَاتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ فِيهَا ۚ هِيَ حَسْبُهُمْ ۚ وَلَعَنَهُمُ اللَّهُ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيمٌ ۝٦٨

(६८) अल्लाह तआला इन मुनाफ़िक़ (अवसर-वादी) पुरुषों स्त्रियों तथा काफ़िरों से नरक की अग्नि का वायदा कर चुका है, जहाँ ये सदा रहेंगे, वही उनके लिए पर्याप्त है, उन पर अल्लाह की धिक्कार है। तथा उन के लिए स्थाई यातना है।

كَالَّذِينَ مِن قَبْلِكُمْ كَانُوا أَشَدَّ مِنكُمْ قُوَّةً وَأَكْثَرَ أَمْوَالًا وَأَوْلَادًا فَاسْتَمْتَعُوا بِخَلَاقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُم بِخَلَاقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ

(६९) तुम से पूर्वजनों[2] के समान जो तुम से बलवान तथा धन संतान में अत्यधिक थे तो वह अपना धार्मिक भाग बरत गये फिर तुम ने भी अपना भाग बरत लिया।[3] जैसे तुम से

---

[1]अर्थात अल्लाह भी उनसे ऐसा ही व्यवहार करेगा कि जैसे कि उसने उन्हें भुला दिया। इस प्रकार अन्य स्थान पर फ़रमाया :

﴿الْيَوْمَ نَنسَاكُمْ كَمَا نَسِيتُمْ لِقَاءَ يَوْمِكُمْ هَٰذَا﴾

"आज हम तुम्हें उसी प्रकार भुला देंगे, जिस प्रकार तुम हमारी मुलाकात के इस दिन को भुलाये हुए थे।" (सूर: अल-जासिय:-३४)

अर्थ यह है कि जिस प्रकार संसार में उन्होंने अल्लाह के आदेश को छोड़े रखा, क़ियामत वाले दिन अल्लाह तआला अपनी दया तथा कृपा से वंचित रखेगा। अत: نسيان (निस्यान) का सम्बन्ध अल्लाह तआला की ओर ज्ञान शास्त्र में नियमों के अनुसार समानता के रूप से है। अपितु अल्लाह तआला भूलने के दोष से पवित्र है, अर्थात उसकी यह विशेषता है कि वह किसी भी प्रकार से नहीं भूलता।

[2]अर्थात तुम्हारा हाल भी कर्मों तथा परिणामों के आधार पर पूर्व के समुदायों के काफ़िरों जैसा ही है। अब अनुपस्थिति के बजाय, मुनाफ़िक़ों को सम्बोधित किया जा रहा है।

[3]خلاق का अन्य अनुवाद सांसारिक भाग भी किया गया है। अर्थात तुम्हारे भाग्य में दुनिया का जितना भाग लिख दिया गया है, उसे बरत लो, जिस प्रकार से तुम से पूर्व के लोगों ने अपना भाग बरता। तथा फिर मरण अथवा यातना से आलिंगित हो गये।

الَّذِينَ مِن قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ وَخُضْتُمْ كَالَّذِي خَاضُوا ۚ أُولَٰئِكَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٦٩﴾

पूर्व लोग अपने भाग से लाभान्वित हुये थे तथा तुम ने भी उसी प्रकार ठट्ठा वाला गप किया जैसे उन्होंने किया था।[1] उनके कार्य लोक-परलोक में नष्ट हो गये तथा यही लोग क्षतिग्रस्त हैं।[2]

أَلَمْ يَأْتِهِمْ نَبَأُ الَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ وَقَوْمِ إِبْرَاهِيمَ وَأَصْحَابِ مَدْيَنَ وَالْمُؤْتَفِكَاتِ ۚ أَتَتْهُمْ رُسُلُهُم

(७०) क्या उन्हें अपने से पूर्व के लोगों के समाचार नहीं पहुँचे। नूह तथा आद एवं समूद के समुदाय तथा इब्राहीम के समुदाय एवं मदयन के निवासी और (उलट-पुलट कर दी गयी बस्तियों के) लोगों के,[3] उनके

---

[1]अर्थात अल्लाह की आयतों तथा अल्लाह के पैग़म्बरों को झुठलाने के लिए। अथवा अन्य भावार्थ यह है कि दुनिया के साधनों तथा आनन्द एवं खेल-कूद में जिस प्रकार मग्न रहे, तुम्हारी भी यही दशा है। आयत में पूर्व के लोगों से तात्पर्य अहले किताब अर्थात यहूदी तथा ईसाई हैं। जैसे एक हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "सौगन्ध है उस शक्ति की जिसके हाथों में मेरा प्राण है, तुम अपने से पूर्व के लोगों का अनुसरण अवश्य करोगे। पंजा से पंजा, बाँह से बाँह तथा हाथ से हाथ, यहाँ तक कि यदि वह किसी गोह की बिल में घुसे हैं तो तुम भी अवश्य घुसोगे।" लोगों ने पूछा, "क्या इससे आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का तात्पर्य अहले किताब हैं" आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "अन्य कौन ?" (सहीह बुख़ारी)

[2]أولئك से तात्पर्य वह लोग हैं जो उपरोक्त दोषों तथा दुर्गुणों से युक्त होते हैं। जिस प्रकार वे हानि युक्त तथा असफल रहे तुम भी उसी प्रकार रहोगे। यद्यपि शक्ति में वह तुम से अधिक शक्तिशाली तथा धन तथा सन्तान में भी अधिक थे। उसके उपरान्त भी अल्लाह के प्रकोप से सुरक्षित न रह सके, तो तुम जो उनसे प्रत्येक क्षेत्र में कम हो, किस प्रकार अल्लाह की पकड़ से बच सकते हो।

[3]यहाँ उन छः समुदायों का वर्णन किया गया है, जिनका स्थान सीरिया देश रहा है। यह अरब क्षेत्र के निकट है तथा उनकी कुछ बातें शायद उन्होंने अपने पूर्वजों से सुनी भी हों। नूह का समुदाय जो जल प्रलय में डूबो दिया गया, आद का समुदाय जो सामर्थ्य तथा शक्ति में श्रेष्ठ होने के उपरान्त, तेज हवाओं के झोंकों से नष्ट कर दिये गये। समूद का समुदाय, जिसे आकाश की चीख ने नष्ट कर दिया। इब्राहीम के समुदाय जिसके राजा नमरूद बिन किनआन बिन कोश को मच्छर से मरवा दिया गया। मदयन के

بِالْبَيِّنٰتِ ۚ فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوْٓا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُوْنَ ۝

पास रसूल (ईशदूत) दलीलें लेकर पहुँचे,[1] तो अल्लाह तआला ऐसा न था कि उन पर अत्याचार करे, अपितु उन्होंने स्वयं ही अपने ऊपर अत्याचार किया।[2]

وَالْمُؤْمِنُوْنَ وَالْمُؤْمِنٰتُ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۘ يَاْمُرُوْنَ

(७१) मुसलमान पुरुष व स्त्री एक-दूसरे के (पक्षपाती सहायक तथा) मित्र हैं[3] वे भलाईयों

निवासी (आदरणीय शुऐब का समुदाय) जिन्हें चीख, भूकम्प तथा बादलों की छाया के प्रकोप से नष्ट किया गया। तथा उल्टे-पल्टे गये लोग, इससे तात्पर्य लूत का समुदाय है, जिनकी बस्ती का नाम "सदूम" था। اِئتكاف का अर्थ है उलट-पलट देना। उन पर एक तो आकाश से पत्थर बरसाये गये, दूसरे उनकी बस्ती को ऊपर उठा कर नीचे फेंका गया, जिससे पूरी बस्ती ऊपर तले हो गयी। इस आधार पर उन उल्टे-पल्टे लोगों को "असहाब मुतफ़िक़ात" कहा जाता है।

[1]इन सभी समुदायों के पास उनके पैग़म्बर, जो उन्हीं के समुदाय का एक पुरुष होता था, आये। परन्तु उन्होंने उनकी बातों को कोई महत्व ही नहीं दिया। अपितु झुठलाने तथा द्वेष का मार्ग अपनाया, जिसका परिणाम अन्त में अल्लाह के प्रकोप के रूप में सामने आया।

[2]अर्थात यह प्रकोप उनके निरन्तर अत्याचार का प्रतिफल है। अकारण अल्लाह के प्रकोप का शिकार नहीं हुए।

[3]मुनफ़िक़ों (द्वयवादियों) के दुर्गुणो की तुलना में मुसलमानों के सदगुणों की चर्चा हो रही है। प्रथम विशेषता : वे एक-दूसरे के मित्र, सहायक तथा दुख के साथी हैं जिस प्रकार हदीस में है।

« الْمُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِ كَالْبُنْيَانِ، يَشُدُّ بَعْضُهُ بَعْضًا ».

"मोमिन मोमिन के लिए एक दीवार की तरह है जिसकी एक ईंट दूसरी ईंट की मज़बुती का साधन है।" (सहीह/बुख़ारी किताबुस्सलात बाब तश्बीकिल असाबेअ फ़िल मस्जिदे व ग़ैरेही, मुस्लिम बाब तराहुमुल मोमिनीन)

दूसरी हदीस में आया है।

« مَثَلُ الْمُؤْمِنِينَ فِي تَوَادِّهِمْ، وتَرَاحُمِهِمْ، كَمَثَلِ الْجَسَدِ الْوَاحِدِ إِذَا اشْتَكَى مِنْهُ عُضْوٌ، تَدَاعَى لَهُ سَائِرُ الْجَسَدِ بِالْحُمَّى وَالسَّهَرِ ».

بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَيُطِيعُونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ ۚ أُولٰٓئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللّٰهُ ۗ إِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٧١﴾

का आदेश देते हैं तथा बुराईयों से रोकते हैं,[1] नमाज़ें नियमित रूप से पढ़ते हैं, ज़कात अदा करते हैं, अल्लाह तथा उसके रसूल की बात मानते हैं,[2] यही लोग हैं जिन पर अल्लाह (तआला) अतिशीघ्र कृपा करेगा, नि:संदेह अल्लाह विवेकी प्रभावी है।

وَعَدَ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنٰتِ جَنّٰتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهٰرُ خٰلِدِينَ فِيهَا وَمَسٰكِنَ طَيِّبَةً فِي جَنّٰتِ عَدْنٍ ۚ وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللّٰهِ أَكْبَرُ ۚ

(७२) इन ईमानदार पुरुषों तथा स्त्रियों से अल्लाह (तआला) ने उन स्वर्गों का वायदा किया है जिनके नीचे नहरें बह रहीं हैं, जहाँ वे सदैव रहने वाले हैं तथा उन स्वच्छ पवित्र भवन का,[3] जो उन अनन्त स्वर्ग में हैं, तथा

"मोमिन का उदाहरण आपस में एक-दूसरे के साथ प्रेम करने तथा कृपा करने में एक शरीर की भाँति है कि जब शरीर के एक अंग को दर्द होता है तो सारे शरीर को बुखार हो जाता है तथा सजग रहता है।" (सहीह मुस्लिम बाब मज़कूर तथा अल्बुखारी किताबुल आदाब बाब रहमतुन्नास वल बहाएम)

[1]यह ईमानवालों का दूसरा विशेष गुण है معروف (मारूफ़) वह है जिसे धर्म विधान ने मारूफ़ (अर्थात नेकी, पुण्य तथा भलाई) कहा है منكر (मुनकर) वह है जिसे धर्म विधान ने मुनकर (अर्थात बुरा) माना है न कि वह जिसे लोग अच्छा या बुरा कहें।

[2]नमाज़ अल्लाह के अधिकारों में परम आराधना है तथा ज़कात अन्य लोगों के अधिकार के आधार पर विशेष स्थान रखती है, इसी कारण इन दोनों का विशेष रूप से वर्णन करके कहा गया है कि वह प्रत्येक विषय में अल्लाह तथा उसके रसूल के आदेशों का पालन करते हैं।

[3]जो मोती तथा याक़ूत (पुलक) से तैयार किये गये होंगे عدن के कई अर्थ किये गये हैं एक अर्थ सदैव का है।

ذَٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿٧٢﴾

अल्लाह की प्रसन्नता सब से महान है,[1] यही बहुत बड़ी सफलता है।

يَا أَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنَافِقِينَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ ۚ وَمَأْوَاهُمْ جَهَنَّمُ ۖ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿٧٣﴾

(७३) हे नबी ! काफ़िरों तथा पाखंडियों से धर्मयुद्ध करते रहो ।[2] तथा उन पर कड़ाई करो ।[3] उनका मूल स्थान नरक है, जो अत्यधिक बुरा स्थान है ।[4]

---

[1]हदीस (रसूल का कथन) में भी आता है कि स्वर्ग की सभी प्रदानों के बाद स्वर्ग वासियों को सर्वोत्तम प्रदान अल्लाह की प्रसन्नता के रूप में मिलेगा। (सहीह बुख़ारी तथा मुस्लिम किताबुल रिकाक तथा किताबुल जन्न:)

[2]इस आयत में नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को काफ़िरों तथा अवसर-वादियों से धर्मयुद्ध तथा उन पर कड़ाई करने का आदेश दिया जा रहा है, नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पश्चात इससे सम्बन्धित आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का अनुयायी है । काफ़िरों के साथ द्वयवादियों से भी जो धर्मयुद्ध करने का आदेश है, इसके विषय में मतभेद है। एक मत तो यही है कि यदि अवसरवादी का द्वयवाद तथा भ्रष्टता स्पष्ट हो जाये, तो उनसे भी उसी प्रकार धर्मयुद्ध किया जाये, जिस प्रकार काफ़िरों के साथ किया जाता है । दूसरा मत यह है कि अवसरवादियों से धर्मयुद्ध करना यह है कि उन्हें शिक्षा, भाषण तथा मुख से समझाया जाये। अथवा वे सभ्यता के विरुद्ध अपराध करें तो उनको दंडित किया जाये। तीसरा मत यह है कि धर्मयुद्ध का आदेश काफ़िरों से सम्बन्धित है तथा कठोरता करना पाखंडियों के लिए। इमाम इब्ने कसीर फ़रमाते हैं कि इन मतों में आपस में कोई भेद तथा विरोध नहीं, इसलिए समय तथा परिस्थितियों के अनुसार इनमें से किसी भी मत के आधार पर कार्य करना चाहिए।

[3] غِلْظَة का विलोम رَأْفَة है, जिसका अर्थ कोमलता तथा प्रेम करने के हैं। इस आधार से غِلْظَة का अर्थ कड़ाई तथा बलपूर्वक शत्रुओं के विरुद्ध कार्यवाही है। मात्र मुख के कड़े भाषण का तात्पर्य नहीं है। इसलिए कि वह तो नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सदव्यवहार के ही विरुद्ध है, उसे आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम स्वयं न कर सकते थे न अल्लाह तआला की ओर से ही आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को आदेश मिल सकता था।

[4]धर्मयुद्ध तथा कठोरता के आदेश का सम्बन्ध संसार से है। आख़िरत में उनके लिए नरक है जो सबसे बुरा स्थान है।

يَحْلِفُونَ بِاللَّهِ مَا قَالُوا ؕ وَلَقَدْ قَالُوا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَكَفَرُوا بَعْدَ إِسْلَامِهِمْ وَهَمُّوا بِمَا لَمْ يَنَالُوا ۚ وَمَا نَقَمُوا إِلَّا أَنْ أَغْنَاهُمُ اللَّهُ وَرَسُولُهُ مِنْ فَضْلِهِ ۚ فَإِنْ يَتُوبُوا يَكُ خَيْرًا لَهُمْ ۖ وَإِنْ يَتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللَّهُ عَذَابًا أَلِيمًا

(७४) ये अल्लाह की सौगन्ध खा कर कहते हैं किं उन्होंने नहीं कहा, यद्यपि कि नि:संदेह कुफ्र का शब्द इनके मुख से निकल चुका है। तथा ये अपने इस्लाम के उपरान्त भी नास्तिक हो गये हैं।[1] तथा इन्होंने उस कार्य का निश्चय भी किया है जिसे प्राप्त न कर सके।[2] ये केवल इसी बात का बदला ले रहे हैं कि उन्हें अल्लाह ने अपनी कृपा से तथा इसके रसूल ने धनवान कर दिया।[3] यदि यह अब

---

[1]व्याख्याकारों ने इसकी व्याख्या में विभिन्न घटनाओं का वर्णन किया है, जिनमें अवसरवादियों ने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शान में अपशब्द कहे, जिसे मुसलमानों ने सुन लिया तथा आकर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से बताया, परन्तु आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पूछने पर साफ मुकर गये, अपितु सौगन्ध तक खा लिया कि उन्होंने ऐसी बातें नहीं कीं। जिस पर यह आयत उतरी। इससे यह भी ज्ञात हुआ कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शान में अपमान करना कुफ्र है। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शान में अपशब्द कहने वाला मुसलमान नहीं रह सकता।

[2]इसके विषय में भी कुछ घटनाओं का वर्णन मिलता है जैसे तबूक से वापसी के समय अवसरवादियों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विरुद्ध षड़यन्त्र रचा जिसमें वे सफल नहीं हो सके कि दस-बारह अवसरवादी एक घाटी में आप के पीछे लग गये जहाँ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शेष सेना से अलग लगभग अकेले गुज़र रहे थे। उनकी योजना यह थी कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर आक्रमण करके आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का काम तमाम कर देंगे। इसकी सूचना प्रकाशना (वह्यी) के द्वारा आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अल्लाह ने दे दी, जिससे आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपना बचाव कर लिया।

[3]मुसलमानों की हिजरत के पश्चात मदीना नगर को केन्द्रीय अस्तित्व प्राप्त हो गया, जिसके कारण वहाँ व्यापार की भी उन्नति हुई, तथा मदीना के निवासियों की आर्थिक परिस्थितियों में प्रगति हुई। मदीना के द्वयवादियों को भी इससे लाभ हुआ। अल्लाह तआला इस आयत में यही फ़रमा रहे हैं कि क्या उन लोगों को इस बात की अप्रसन्नता है कि अल्लाह ने उनको अपनी कृपा से धनवान बना दिया है ? अर्थात यह

فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ ۚ وَمَا لَهُمْ فِي الْأَرْضِ مِن وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ﴿٧٤﴾

भी क्षमा-याचना कर लें तो यह इनके पक्ष में अच्छा है तथा यदि मुहँ मोड़े रहें, तो अल्लाह (तआला) उन्हें लोक-परलोक में दुखदायी यातना देगा । तथा समस्त धरती में उनका कोई पक्षधर तथा सहाय न खड़ा होगा।

وَمِنْهُم مَّنْ عَاهَدَ اللَّهَ لَئِنْ آتَانَا مِن فَضْلِهِ لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُونَنَّ مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿٧٥﴾

(७५) इनमें वह भी हैं जिन्होंने अल्लाह से वायदा किया था कि यदि वह हमें अपनी कृपा से धन प्रदान करेगा तो हम अवश्य सत्कार करेंगे तथा पूर्ण रूप से पुनीतों में हो जायेंगे।

فَلَمَّا آتَاهُم مِّن فَضْلِهِ بَخِلُوا بِهِ وَتَوَلَّوا وَّهُم مُّعْرِضُونَ ﴿٧٦﴾

(७६) परन्तु जब अल्लाह ने अपनी कृपा से उन्हें दिया तो यह उसमें कंजूसी करने लगे तथा टाल-मटोल करके मुख मोड़ लिया।[1]

فَأَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا فِي قُلُوبِهِمْ إِلَىٰ يَوْمِ يَلْقَوْنَهُ بِمَا أَخْلَفُوا اللَّهَ مَا وَعَدُوهُ وَبِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ﴿٧٧﴾

(७७) तो इसके दंडस्वरूप अल्लाह ने उनके दिलों में द्वयवाद डाल दिया, अल्लाह से मिलने के दिनों तक । क्योंकि उन्होंने अल्लाह से किये हुए वायदे का विरोध किया तथा झूठ बोलते रहे।

अप्रसन्नता तथा क्रोध वाली बातें तो नहीं हैं, अपितु उनको तो अल्लाह की कृतज्ञता व्यक्त करना चाहिए कि उसने उन्हें निर्धनता से निकाल कर सुसम्पन्न बना दिया।

नोट:- अल्लाह तआला के साथ रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का वर्णन इस लिए है कि इस उन्नति का स्पष्ट कारण तथा साधन रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ही बने थे, वरन् वास्तव में धनवान बनाने वाला तो अल्लाह ही था। इसी लिए आयत में من فضلـه में एक वचन सर्वनाम है कि अल्लाह ने अपनी कृपा से उसे धनवान कर दिया।

[1]इस आयत को कुछ व्याख्याकार एक सहाबी आदरणीय साअलबा बिन हातिब अन्सारी के विषय में बताते हैं परन्तु प्रमाण के आधार पर यह सही नही है। सही बात यह है कि इसमें भी अवसरवादियों के एक अन्य कर्म का वर्णन किया गया है।

(७८) क्या वे यह नहीं जानते कि अल्लाह (तआला) को उनके दिल का भेद तथा उनकी कानाफूसी सब ज्ञात है तथा अल्लाह (तआला) सभी गुप्त बातों का जानकार है ?[1]

أَلَمْ يَعْلَمُوٓا۟ أَنَّ ٱللَّهَ يَعْلَمُ سِرَّهُمْ وَنَجْوَىٰهُمْ وَأَنَّ ٱللَّهَ عَلَّٰمُ ٱلْغُيُوبِ ﴿٧٨﴾

(७९) जो लोग उन मुसलमानों पर आक्षेप लगाते हैं, जो दिल खोलकर दान करते हैं तथा उन लोगों पर जिनको अपने परिश्रम के सिवाय कुछ प्राप्त ही नहीं, तो ये उनका उपहास करते हैं।[2] अल्लाह भी उनसे उपहास करता है।[3] और उन्हीं के लिए दुखदायी यातना है।

ٱلَّذِينَ يَلْمِزُونَ ٱلْمُطَّوِّعِينَ مِنَ ٱلْمُؤْمِنِينَ فِى ٱلصَّدَقَٰتِ وَٱلَّذِينَ لَا يَجِدُونَ إِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُونَ مِنْهُمْ ۙ سَخِرَ ٱللَّهُ مِنْهُمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٧٩﴾

---

[1]इसमें उन अवसरवदियों के लिए कड़ी चेतावनी है जो अल्लाह तआला से वायदा करते हैं फिर उसकी चिन्ता नहीं करते। जैसे कि वे यह समझते हैं कि अल्लाह उनकी गुप्त बातों तथा भेदों को नहीं जानता। यद्यपि कि अल्लाह सभी कुछ जानता है, क्योंकि वह तो अन्तर्यामी है। सभी अप्रत्यक्ष बातों को जानता है।

[2]الْمُطَّوِّعِين का अर्थ है जो आवश्यक दान के अतिरिक्त स्वेच्छा से अल्लाह के मार्ग में अधिक ख़र्च करते हैं। جُهْد का अर्थ परिश्रम तथा प्रयत्न है। अर्थात वे लोग जो धनवान तो नहीं हैं, परन्तु इसके उपरान्त भी अपनी परिश्रम तथा प्रयास की कमाई के थोड़ी होने के उपरान्त भी कुछ धन अल्लाह के मार्ग में ख़र्च करते हैं। आयत में पाखण्डियों के एक अन्य अत्यन्त कुरूप कर्म का वर्णन है कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम युद्ध आदि के अवसर पर मुसलमानों से चन्दे के लिए अपील करते तो मुसलमान आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की अपील पर अपने सामर्थ्य के अनुसार उसमें भाग लेते। किसी के पास अधिक माल होता, वह अधिक दान देता, जिसके पास थोड़ा होता, वह थोड़ा देता। पाखण्डी दोनों प्रकार के मुसलमानों की आलोचना करते। अधिक देने वालों के विषय में कहते कि यह दिखावा है तथा अभिमान है तथा थोड़ा देने वालों को कहते कि तेरे इस माल से क्या बनेगा? अथवा अल्लाह तआला तेरे इस दान से निस्पृह है। (सहीह बुख़ारी-१४१५ तथा मुस्लिम-७०६) इस प्रकार वे मुसलमानों का मज़ाक़ उड़ाते।

[3]अर्थात ईमानवालों से उपहास करने का प्रतिफल उन्हें इस प्रकार देता है कि उन्हें अपमानित तथा निरादर करता है। यह साहित्य शास्त्र का नियम है कि किसी अर्थ के लिये वही शब्द प्रयोग कर दिया जाता है जो पहले आया हो इस विधि को अरबी भाषा

اِسْتَغْفِرْ لَهُمْ اَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ ۭ اِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِيْنَ مَرَّةً فَلَنْ يَّغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ ۭ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۭ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۸۰

(८०) आप इनके लिए क्षमा-याचना करें अथवा न करो। यदि आप सत्तर बार भी इनके लिए क्षमा-याचना करें तो भी अल्लाह उन्हें कदापि क्षमा नहीं करेगा।[1] ये इसलिए कि उन्होंने अल्लाह तथा उसके रसूल के प्रति कुफ़्र किया है।[2] और ऐसे भ्रष्टाचारियों को कृपालु अल्लाह मार्गदर्शन नहीं देता।[3]

فَرِحَ الْمُخَلَّفُوْنَ بِمَقْعَدِهِمْ خِلٰفَ رَسُوْلِ اللّٰهِ وَكَرِهُوْٓا اَنْ يُّجَاهِدُوْا

(८१) पीछे रह जाने वाले लोग रसूलुल्लाह (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के विरुद्ध अपने

में "मुशाकलत" कहा जाता है, जैसे यहाँ उपहास के प्रतिफल के लिये उपहास (इस्तेहज़ा) का शब्द प्रयोग कर दिया गया है। अथवा यह शाप है अल्लाह तआला उनसे भी इसी प्रकार उपहास करेगा। जिस प्रकार ये मुसलमानों के साथ उपहास करते हैं। (फ़तहुल क़दीर)

[1]सत्तर की संख्या अतिश्योक्ति तथा अधिकता के लिए है, कि चाहे जितना अधिक उन की दोष मुक्ति के लिए विनती करें अल्लाह तआला उनको कदापि क्षमा नहीं करेगा। यह अर्थ नहीं कि यदि सत्तर से अधिक बार दोष मुक्ति के लिए विनय की गयी तो उनको क्षमा कर दिया जायेगा।

[2]यह क्षमा से वंचित करने का कारण बता दिया गया है, ताकि लोग किसी की सिफ़ारिश की आशा में न रहें वरन् ईमान तथा पुण्य कर्म की दौलत लेकर अल्लाह के सदन में उपस्थित हों। यदि प्रलय सामग्री किसी के पास नहीं होगी तो ऐसे नास्तिकों तथा अवज्ञाकारियों की कोई सिफ़ारिश भी नहीं करेगा, इसलिए कि अल्लाह तआला ऐसे लोगों के लिए सिफ़ारिश की आज्ञा ही प्रदान नहीं करेगा।

[3]इस मार्गदर्शन से तात्पर्य वह मार्गदर्शन है, जो मनुष्य को लक्ष्य (ईमान) तक पहुँचा देता है अन्यथा मार्गदर्शन का वास्तविक अर्थ मार्ग दिखा देना है। इसका प्रबन्ध तो संसार में प्रत्येक मुसलमान तथा काफ़िर के लिए कर दिया गया है

﴿ إِنَّا هَدَيْنَٰهُ ٱلسَّبِيلَ إِمَّا شَاكِرًا وَإِمَّا كَفُورًا ﴾

"तथा हमने उस (मानवगण को) संमार्ग दिखा दिया है या तो कृतज्ञ हो अथवा कृतघ्न बने।" (सूर: अल-दहर)

﴿ وَهَدَيْنَٰهُ ٱلنَّجْدَيْنِ ﴾

"हमने उस (मानव) को (भलाई, बुराई) के दोनों मार्ग दिखा दिये हैं।" (सूर: अल-बलद-१०)

بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَقَالُوا لَا تَنفِرُوا فِي الْحَرِّ قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ أَشَدُّ حَرًّا لَّوْ كَانُوا يَفْقَهُونَ ﴿٨١﴾

बैठे रह जाने पर प्रसन्न हैं।[1] उन्होंने अल्लाह के मार्ग में अपने धन तथा अपने प्राण से धर्मयुद्ध करना अप्रिय रखा तथा उन्होंने कह दिया कि इस गरमी में न निकलो। कह दीजिए कि नरक की अग्नि अत्यधिक गरम है, काश कि वे समझते होते।[2]

فَلْيَضْحَكُوا قَلِيلًا وَلْيَبْكُوا كَثِيرًا جَزَاءً بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٨٢﴾

(८२) अत: उन्हें चाहिए कि बहुत कम हँसें तथा अधिक रोयें,[3] बदले में उसके जो ये करते थे।

فَإِن رَّجَعَكَ اللَّهُ إِلَىٰ طَائِفَةٍ مِّنْهُمْ فَاسْتَأْذَنُوكَ لِلْخُرُوجِ فَقُل لَّن تَخْرُجُوا مَعِيَ أَبَدًا وَلَن تُقَاتِلُوا مَعِيَ عَدُوًّا

(८३) तो यदि अल्लाह तआला आप को उनके किसी गुट[4] कि ओर लौटा कर वापस ले आये फिर ये आप से युद्ध के मैदान में निकलने की आज्ञा माँगें,[5] तो आप कह दीजिए कि तुम मेरे साथ कदापि नहीं चल सकते तथा न मेरे

---

[1]यह उन द्वयवादियों की चर्चा है जो तबूक में नहीं गये थे तथा झूठे कारण बता कर रुकने की अनुमति ले ली। خِلاف का अर्थ है, पीछे अथवा विरोध अर्थात आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जाने के पश्चात आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पीछे अथवा आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विरोध में मदीना मे बैठे रहे।

[2]अर्थात यदि इनको ज्ञात होता कि नरक की अग्नि कि गर्मी के समक्ष दुनिया की गर्मी कोई महत्व नहीं रखती, तो वे कभी भी पीछे न रहते। हदीस में वर्णित है कि दुनिया की यह अग्नि नरक की अग्नि का ७०वाँ भाग है। अर्थात नरक की अग्नि की गर्मी संसार की अग्नि की गर्मी से ६९ गुणा अधिक है। (सहीह बुख़ारी, बदउल ख़ल्क) اللهم احفظنا منها

[3]अर्थ यह है कि ये हँसेंगे थोड़ा तथा रोयेंगे अधिक।

[4]इससे तात्पर्य द्वयवादियों का गुट है। अर्थात यदि अल्लाह तआला आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को तबूक से मदीने वापस ले आये, जहाँ ये पीछे रह जाने वाले मुनाफ़िक़ीन भी हैं।

[5]अर्थात किसी अन्य युद्ध के लिए, साथ जाने के लिए इच्छा व्यक्त करें।

إِنَّكُمْ رَضِيتُم بِالْقُعُودِ أَوَّلَ مَرَّةٍ فَاقْعُدُوا مَعَ الْخَالِفِينَ ﴿٨٣﴾

साथ शत्रु से लड़ाई कर सकते हो। तुमने प्रथम बार ही बैठे रहने को प्रिय समझा था,[1] तो तुम पीछे रह जाने वालों में ही बैठे रहो।[2]

وَلَا تُصَلِّ عَلَىٰ أَحَدٍ مِّنْهُم مَّاتَ أَبَدًا وَلَا تَقُمْ عَلَىٰ قَبْرِهِ ۖ إِنَّهُمْ

(८४) तथा इनमें से कोई मर जाये तो उसकी अर्थी पर नमाज़ आप कदापि न पढ़ें तथा न उसकी क़ब्र (समाधि) पर खड़े हों।[3] यह

---

[1]ये भविष्य में साथ न ले जाने का कारण है कि तुम प्रथम बार साथ नहीं गये, अत: अब तुम इस योग्य नहीं कि तुम्हें किसी युद्ध में साथ ले जाया जाये।

[2]अर्थात अब तुम्हारी दशा यही है कि तुम स्त्रियों, बच्चों तथा वृद्धों के साथ बैठे रहो, जो युद्ध करने के बजाय घर में ही बैठे रहते हैं। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह निर्देश इसलिए दिया गया है ताकि उनके उस दुख तथा क्षोभ एवं पश्चाताप में और तीव्रता आये, जो उन्हें पीछे रह जाने के कारण से था। (यदि था)

[3]यह आयत यद्यपि द्वयवादियों के प्रमुख अब्दुल्लाह बिन उबैय के विषय में उतरी है। परन्तु इसका आदेश सामान्य है। प्रत्येक व्यक्ति जिसकी मृत्यु कुफ़्र तथा द्वयवाद की स्थिति में हुई हो, वह उसमें सम्मिलित है।इसके उतरने का कारण यह है कि अब्दुल्लाह बिन उबैय की मृत्यु हुई, तो उसके पुत्र अब्दुल्लाह (जो मुसलमान तथा अपने पिता के समनाम थे) रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सेवा में उपस्थित हुए तथा कहा कि एक तो आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम (प्रसाद स्वरूप) अपनी कमीज़ प्रदान कर दें ताकि इसमें मैं अपने पिता का कफ़न (शव वस्त्र) बना दूँ। दूसरे यह कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उसकी नमाज़ जनाज़ा पढ़ा दें। आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कमीज प्रदान की तथा नमाज़ पढ़ाने के लिए भी गये। आदरणीय उमर (رضي الله عنه) ने आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कहा कि अल्लाह तआला ने आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ऐसे लोगों की नमाज़ पढ़ाने से रोका है, आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस के पक्ष में दोष मुक्ति की प्रार्थना क्यों करते हैं ? आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, "अल्लाह तआला ने मुझे अधिकार दिया है अर्थात रोका नहीं है। अल्लाह तआला ने फ़रमाया है कि यदि तू सत्तर बार भी उनके दोष मुक्ति के लिए प्रार्थना करेगा तो अल्लाह तआला उन्हें क्षमा न करेगा, तो मैं उनके लिए सत्तर बार से अधिक दोष मुक्ति की प्रार्थना कर लूँगा।" अत: आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने नमाज़ जनाज़ा पढ़ा दी जिस पर अल्लाह तआला ने यह आयत उतार कर भविष्य में मुनाफ़िक़ों के पक्ष में दोष मुक्ति की प्रार्थना पूर्णत: निषेध

رَضُوا بِأَنْ يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ وَطُبِعَ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُونَ ﴿٨٧﴾

(८७) यह तो घर में रहने वाली स्त्रियों का साथ देने पर रीझ गये तथा उनके दिलों पर मुहर लगा दी गयी अब वह कुछ समझ-बूझ नहीं रखते।[1]

لَٰكِنِ الرَّسُولُ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ جَاهَدُوا بِأَمْوَالِهِمْ وَأَنْفُسِهِمْ ۚ وَأُولَٰئِكَ لَهُمُ الْخَيْرَاتُ ۖ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٨٨﴾

(८८) परन्तु स्वयं रसूल (ईशदूत) तथा उसके साथ के ईमानवाले अपने धनों एवं प्राणों से धर्मयुद्ध (जिहाद) करते हैं, उन्हीं के लिए भलाई है तथा यही लोग सफलता पाने वाले हैं।

أَعَدَّ اللَّهُ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا ۚ ذَٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿٨٩﴾

(८९) इन्हीं के लिए अल्लाह (तआला) ने वह स्वर्ग तैयार की हैं, जिनके नीचे नहरें बह रही हैं, जिनमें वह नित्यवासी होंगे। यही बहुत बड़ी सफलता है।[2]

وَجَاءَ الْمُعَذِّرُونَ مِنَ الْأَعْرَابِ لِيُؤْذَنَ لَهُمْ وَقَعَدَ الَّذِينَ كَذَبُوا اللَّهَ وَرَسُولَهُ ۚ

(९०) गँवारों में से बहाना बनाने वाले लोग उपस्थित हुए कि उन्हें अनुमति दी जाये तथा वह बैठे रहें जिन्होंने अल्लाह से तथा उसके

चाहिए था, क्योंकि उनके पास अल्लाह का प्रदान किया हुआ सभी कुछ था। قاعدين का तात्पर्य कुछ मजबूरी के कारण घर में बैठे रहने वाले आदि हैं, जैसाकि अगली आयत में उनको خوالف से तुलना किया गया है, जो خالفة का बहुवचन है अर्थात "पीछे रहने वाली स्त्रियाँ।"

[1]दिलों पर मोहर (मुद्रा) लग जाना, यह निरन्तर पाप करने के कारण होता है जिसका स्पष्टीकरण पहले किया जा चुका है, इसके उपरान्त मनुष्य सोचने-समझने की शक्ति से वंचित हो जाता है।

[2]उन पाखण्डियों के विपरीत ईमानवालों का व्यवहार यह है कि वह अपने तन-मन-धन से अल्लाह के मार्ग में धर्मयुद्ध करते हैं, अल्लाह के मार्ग में उन्हें अपने प्राणों की चिन्ता भी नहीं है तथा न धन की। उनके निकट अल्लाह का आदेश सर्वोपरि है उन्हीं के लिए भलाई है अर्थात परलोक की भलाई तथा स्वर्ग का सुख। तथा कुछ के निकट लोक-परलोक दोनों स्थानों का लाभ, तथा यही लोग सफल तथा उच्च पदों पर आसीन होने के योग्य होंगे।

سَيُصِيبُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٩٠﴾

रसूल से झूठी बातें बनायीं थीं। अब तो उनमें जितने भी काफ़िर है उन्हें दुखदायी यातना पहुँच कर रहेगी।[1]

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضَىٰ وَلَا عَلَى الَّذِينَ لَا يَجِدُونَ مَا يُنفِقُونَ حَرَجٌ إِذَا نَصَحُوا لِلَّهِ وَرَسُولِهِ ۚ مَا عَلَى الْمُحْسِنِينَ مِن سَبِيلٍ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿٩١﴾

(९१) निर्बलों एवं रोगियों पर तथा उन पर जो ख़र्च करने को कुछ नहीं पाते कोई दोष नहीं जब तक वह अल्लाह तथा उसके रसूल (दूत) के हितैषी हों। ऐसे पुण्यकारों पर कोई मार्ग नहीं तथा अल्लाह क्षमावान दयालु है।[2]

---

[1]इन مُعذِّرين के विषय में व्याख्याकारों में मतभेद है। कुछ के निकट नगर से दूर रहने वाले वह ग्रामीण थे जिन्होंने झूठे कारण बता कर आज्ञा प्राप्त कर ली थी। दूसरे उनमें वे भी थे जिन्होंने आकर कारण बताना भी उचित न समझा तथा बैठे रहे। इस प्रकार इस आयत में पाखण्डियों के दो गुटों का वर्णन है। مِنهُم से झूठे कारण प्रस्तुत करने वाले तथा बैठे रह जाने वाले दोनों ही गुटों का वर्णन है अन्य व्याख्याकारों ने معذّرون से तात्पर्य ऐसे ग्रामीण मुसलमान लिए हैं, जिन्होंने उचित कारण प्रस्तुत करके आज्ञा प्राप्त की थी। और معذّرون उनके निकट वास्तव में مُعتذرون हैं। अरबी का अक्षर 'त' को अक्षर जाल में संधि कर दी गई है। तथा معتذر का अर्थ है, वास्तविक कारण रखने वाले। इस आधार पर आयत के अगले वाक्य में पाखण्डियों का वर्णन है। तथा आयत में दो गुटों का वर्णन है पहले वाक्य में उन मुसलमानों का जिनके पास वास्तव में कारण थे तथा दूसरे पाखण्डी, जो बिना कारण बताये बैठे रहे तथा आयत के अन्त में जो चेतावनी है, इसी दूसरे गुट के लिए है। والله أعلم

[2]इस आयत में उन लोगों का वर्णन है जो वास्तव में विवश थे तथा उनका कारण भी स्पष्ट था। जैसाकि १. निर्बल तथा कमज़ोर अर्थात बूढ़े तथा अंधे अथवा लंगड़े आदि मजबूर इसी परिधि में आते हैं। कुछ ने उनको रोगियों में सम्मिलित किया है २. रोगी ३. जिनके पास धर्मयुद्ध के ख़र्च उठाने की शक्ति नहीं थी तथा बैतुल माल (धार्मिक कोष) में भी उनके खर्च उठाने की शक्ति न थी। अल्लाह तथा उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हित से तात्पर्य है, धर्मयुद्ध की उनके दिलों में तड़प, मुजाहिदीन (धर्मयुद्ध के सैनिकों) से प्रेम रखते हैं तथा अल्लाह एवं उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आदेशों का पालन करते हैं। ऐसे मोहसिनीन (परोपकारी) यदि धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने के अयोग्य हों तो उन पर कोई पाप नहीं।

(९२) तथा न उन पर जो आप के पास आते हैं कि आप उन्हें सवारी का प्रबन्ध कर दें तो आप उत्तर देते हैं कि मैं तुम्हारे वाहन के लिये कुछ नहीं पाता तो वह दुःख से अश्रु बहाते लौट जाते हैं कि उन्हें ख़र्च करने के लिए कुछ भी प्राप्त नहीं ।[1]

وَّلَا عَلَى الَّذِيْنَ اِذَا مَآ اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَآ اَجِدُ مَآ اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ ص تَوَلَّوْا وَّاَعْيُنُهُمْ تَفِيْضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوْا مَا يُنْفِقُوْنَ ﴿٩٢﴾

(९३) निश्चय उन पर मार्ग (इल्जाम) है जो धनी रह कर भी आप से अनुमती माँगते हैं। यह नारियों के साथ रह जाने पर प्रसन्न हैं एवं अल्लाह ने उनके दिलों पर मुहर लगा दी है जिस के कारण वह अज्ञान हो गये हैं ।[2]

اِنَّمَا السَّبِيْلُ عَلَى الَّذِيْنَ يَسْتَاْذِنُوْنَكَ وَهُمْ اَغْنِيَآءُ ج رَضُوْا بِاَنْ يَّكُوْنُوْا مَعَ الْخَوَالِفِ لا وَطَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ فَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ﴿٩٣﴾

---

[1]यह मुसलमानों के एक गुट का वर्णन है, जिनके पास अपनी सवारियाँ भी नहीं थीं तथा नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने भी उन्हें सवारियाँ उपलब्ध कराने में असमर्थता व्यक्त की जिस पर उन्हें इतना दुख हुआ कि आँखों से आँसू निकल पड़े। رضي الله عنهم अर्थात निःस्वार्थी मुसलमान, जो किसी भी प्रकार से उचित कारण रखते थे । अल्लाह तआला ने जो प्रत्येक प्रत्यक्ष तथा छिपी बातों का जानने वाला है, उनको धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने से अलग कर दिया। बल्कि हदीस में आता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उन असमर्थ लोगों के विषय में धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने वाले लोगों से फ़रमाया कि, "तुम्हारे पीछे मदीने में कुछ लोग ऐसे भी हैं कि तुम जिस घाटी को तय करते हो, तथा जिस मार्ग पर चलते हो, तुम्हारे साथ वह बदला पाने में समान रूप से सम्मिलित हैं।" सहाबा कराम ने पूछा, यह किस प्रकार हो सकता है, जब कि वे मदीने में बैठे हैं ? आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया «حَبَسَهُمُ الْعُذْرُ». "कारण ने उन्हें वहाँ रोक दिया है।" (सहीह/बुख़ारी जिहाद तथा सहीह मुस्लिम संख्या-१५१८)

[2]ये पाखण्डी हैं जिनका वर्णन आयत संख्या ८६ तथा ८७ में गुजर चुका है। यहाँ पुनः उनका वर्णन निःस्वार्थ मुसलमानों की तुलना में हुआ है। خوالف बहुवचन خالفة का है (पीछे रहने वाली) तात्पर्य स्त्रियाँ, बच्चे, असमर्थ तथा अत्यधिक रोग से पीड़ित एवं वृद्ध हैं, जो युद्ध में सम्मिलित होने से असमर्थ हैं। لا يعلمون का अर्थ है वे नहीं जानते कि पीछे रहना कितना बड़ा अपराध है, वरन् संभवतः वे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पीछे न रहते।